उपभोग नहीं उपयोग

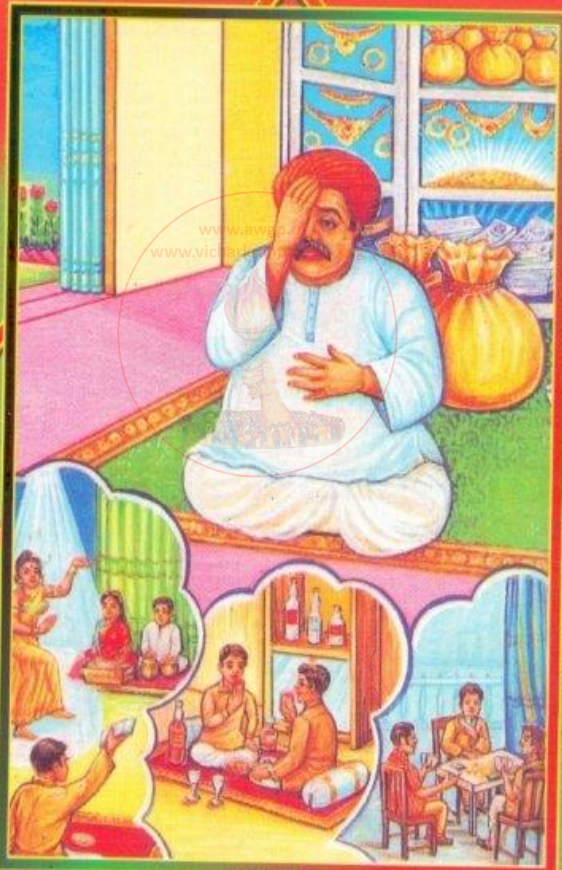

-श्रीराम शर्मा आचार्य

: BOOK MADE AVAILABLE FOR DIGITIZATION BY :

VICHARKRANTI PUSTAKALAY
SURAT, INDIA

: OUR MAIN CENTERS :

Shantikunj, Haridwar,
Uttaranchal, India – 249411
Phone no : 91-1334- 260602,
Website : www.awgp.org
E-mail : shantikunj@awgp.org

Gayatri Tapobhumi,
Mathura, U.P., India – 281003
Phone no : 91-0565-2530128,
Website : www.awgp.org
E-mail : yugnirman@awgp.org

: BOOK DIGITIZED BY :

Vicharkranti Pustakalay, Thana-Faliya, Dindoligam, Surat-394210, Gujarat, India
E-mail: vicharkranti.awgp@gmail.com | Website : www.vicharkrantibooks.org

उपभोग नहीं उपयोग

❐

लेखक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

❐

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

❐

पुनरावृत्ति सन् २०१४ मूल्य : ९.०० रुपये

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

जिनके मुँह के कौर छीने गए हैं, वे पुनः उन्हें उन लोगों से छीन लें, जिन्होंने परिग्रह के पाप किए हैं, उसके पहले ही उसका प्रायश्चित कर लेना चाहिए और अमर्यादित उपभोग से विरत होकर, साधन-सुविधाओं के सदुपयोग की दिशा में प्रवृत्त होना चाहिए यही धर्म का मार्ग है।

मुद्रक :

युग निर्माण योजना प्रेस,

गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सरल जीवन-क्रम अपनाएँ

जीवन उतना जटिल नहीं है जितना कि बन जाता है या बना दिया गया है। हँसी-खुशी की संभावनाओं से वह भरा-पूरा है। शरीर और मन की संरचना इस प्रकार हुई है कि वह बाहर के तनिक से साधनों की सुविधा प्राप्त हो जाने पर सहज ही स्वस्थ और सुखी रह सकता है। अति स्वल्प साधनों से अन्य जीवधारी अपना संतोषपूर्ण व्यवस्था क्रम चलाते रहते हैं, न उन्हें रुग्णता सताती है और न खिन्नता। यदि उन्हें सताया न जाए, तो शरीर यात्रा की प्रचुर परिमाण में उपलब्ध साधन सामग्री से ही अपना काम चला लेते हैं और हँसी-खुशी के दिन काटते हैं।

मनुष्य को यह सुविधा और भी अधिक मात्रा में उपलब्ध है। उसका अस्तित्व एवं व्यक्तित्व इतना समर्थ है कि न केवल शारीरिक सुविधा की सामग्री, वरन् मानसिक प्रसन्नता की परिस्थिति भी स्वल्प प्रयत्न से प्रचुर मात्रा में प्राप्त कर सकता है। इतने पर भी देखा यह जाता है कि मनुष्य खिन्नता और अतृप्ति से ही घिरा रहता है। आधियों और व्याधियों की घटाएँ उस पर छाई रहती हैं।

सौभाग्य जैसे समस्त साधन प्राप्त होने पर भी दुर्भाग्य की जलन में झुलसते रहने के पीछे एक ही कारण ढूँढ़ा जा सकता है कि सहज सरल रीति-नीति को छोड़कर हम जाल-जंजाल भरी विद्रुप विडंबनाओं में उलझ गए और अपना मार्ग स्वयं कंटकाकीर्ण बना लिया। सहज स्वाभाविकता का नाम है धर्म और उसके विपरीत आचरण को अधर्म कहते हैं। वैयक्तिक और सामाजिक कर्तव्यों को जो सही तरह समझता है और सही तरह पालन करता है, उसे स्वल्प साधनों में भी तुष्ट-पुष्ट और प्रगतिशील देखा जा सकेगा।

सुख-शांति के लिए अधिक सुविधाजनक साधनों की खोज में विज्ञान और शासन के प्रयास जुटे रहते हैं, पर यह भुला नहीं दिया जाना चाहिए मनुष्य एक चेतनात्मक परिपूर्ण सत्ता है, आनंद का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उद्‌गम उसके भीतर है। वही अंतःज्योति जब बाह्य जगत् पर प्रतिविंबित होती है, तो सौंदर्य संतोष एवं रसानुभूति का अनुभव होता है। विचारणा का स्तर ऊँचा उठाए बिना विपुल साधन संपत्ति होने पर भी न आनंद मिल सकेगा, न उल्लास न संतोष। विचारणा को उत्कृष्टता के स्तर तक उठाने और सुदृढ़ बनाने में धर्म का तत्त्वज्ञान ही समर्थ हो सकता है। भौतिक विज्ञान इस प्रयोजन की पूर्ति में बहुत अधिक सहायता नहीं कर सकता।

'मॉर्डन मैन इन सर्च ऑफ रिलीजन' ग्रंथ में यह प्रतिपादन किया गया है कि विज्ञान में भी किसी वस्तु का ज्ञान प्राप्त करने के लिए विशिष्ट यंत्र ही उपयोगी होते हैं। न तो सूक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा दूरस्थ तारा दिखाई देता है और न ही सर्जन की छुरी से मलेलिया के अत्यंत सूक्ष्म परमाणु मारे जा सकते हैं। इसी प्रकार बुद्धि के द्वारा आध्यात्मिक सत्यों का परीक्षण नहीं किया जा सकता भले ही वह कितनी ही तीक्ष्ण क्यों न हो ?

विज्ञान द्वारा सुविधा-साधनों की वृद्धि की दिशा में किए गए प्रयासों से समुचित लाभ तभी उठाया जा सकेगा, जब भावना एवं दृष्टिकोण को ऊँचा उठा सकने में समर्थ एवं तत्त्व को समझाने के लिए भी समानंतर प्रयास किया जाए।

'ईवोलूशन इन साइंस एंड रिलीजन' के लेखक का कथन है—विज्ञान ने शक्ति को पदार्थ के रूप में परिवर्तित करके यह सिद्ध कर दिया है कि सूक्ष्म को स्थूल में और स्थूल को सूक्ष्म में बदला जा सकता है।

दर्शन भी यह सिद्ध करता रहा है कि विचार को घटना के रूप में विकसित किया जा सकता है और घटनाएँ विचारों का निर्माण कर सकने में समर्थ हैं।

पदार्थ से सुख मिलता है यह सिद्धांत भी अपने स्थान पर ठीक है, पर गलत यह भी नहीं कि उत्कृष्ट चिंतन से उपलब्ध साधनों की मात्रा अधिक न होने पर भी जो हस्तगत है, उनसे इतना आनंद उठाया जा सकता है, जो परिपूर्ण संतोष प्रदान कर सके।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सामाजिक सुव्यवस्था के लिए धर्म धारणा से बढ़कर और कोई साधन नहीं हो सकता। बलपूर्वक अवांछनीयता पर नियंत्रण करने में शासन की अधिकांश क्षमता नष्ट होती है फिर भी कुछ लाभदायक समाधान नहीं मिलता। यदि धर्म-धारणा को प्रखर और समुन्नत बना सकने योग्य वातावरण उत्पन्न किया जा सके, उचित साधन जुटाए जा सकें, तो निस्संदेह सामाजिक, सुव्यवस्था और राष्ट्रीय समर्पण का प्रयोजन सहज ही पूरा हो सकता है। सार्वभौम और सर्वकालीन सुख-शांति की स्थापना धर्म धारणा को सुदृढ़ और समुन्नत बनाकर ही की जा सकती है। मात्र आर्थिक समृद्धि से न तो स्थाई समृद्धि संभव है, न ही शांति।

धन का उपार्जन और सदुपयोग

मानव समाज में होने वाले संघर्षों का एक कारण आर्थिक प्रश्न भी रहा है। धन, दौलत, संपत्ति, जायदाद को लेकर सदा से परस्पर संघर्ष, लड़ाई-झगड़े, लूट-खसोट होते रहे हैं। व्यापक पैमाने पर होने वाले आक्रमण, युद्ध आदि का कारण भी बहुत कुछ अर्थ ही रहा है। आज भी संसार में व्याप्त संघर्ष का आधार अर्थव्यवस्था ही है। मालिक और नौकर में, गरीब और अमीर में हो रहे संघर्ष की खाई आज कुछ कम नहीं है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि अर्थव्यवस्था की शुद्धि मानव जीवन की सुरक्षा, प्रगति के लिए अत्यावश्यक है। इसलिए मनीषियों ने इस समस्या पर गंभीरता से विचार किया और अपरिग्रह का स्वर्ण-सूत्र मनुष्य के लिए दिया। उसे धर्म व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण अंग निर्धारित करके परिग्रह को पाप बताया।

आज के अर्थ-प्रधान युग में इन धर्म व्यवस्थाओं को कैसे अपनाया जाए, सामान्य मनुष्य भी इन्हें आचरण में कैसे लाएँ ? ये विचारणीय प्रश्न हैं, क्योंकि आज की अर्थ-व्यवस्था इतनी दूषित हो गई है कि भविष्य के लिए अर्थ संग्रह का विचार न रक्खा जाए तो सामान्य व्यक्ति का जीवन निर्वाह कठिन हो जाए। आज की सामाजिक परिस्थितियाँ इतनी जटिल हो गई हैं कि दुर्घटना, बुढ़ापा, बीमारी, असहाय हालत में मनुष्य के पास कोई आर्थिक व्यवस्था न हो तो

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़े। जो लोग दूरदर्शिता के साथ इन परिस्थितियों का ध्यान रखकर, आर्थिक व्यवस्था को मजबूत रखते हैं, वे सरलता से कठिनाइयों में से निकल जाते हैं। आवश्यकता पड़ने पर दूसरों की मदद भी कर सकते हैं। इसीलिए नीतिकारों ने आर्थिक व्यवस्था का मध्यम मार्ग सुझाते हुए बताया है कि "बुद्धिमान मनुष्य को ऐसा आचरण करना चाहिए कि चैन से सो सके। जवानी में ऐसा रहना चाहिए कि बुढ़ापा सुख से बिता सके।" सारांश यह है कि भविष्य में आने वाली अनजान घटनाओं, कठिनाई, परेशानियों में सरलता से जीवन निर्वाह के लिए कुछ संग्रह करना मनुष्य के लिए उचित है। अन्य प्राणियों में भी ऐसी प्रवृत्ति पाई जाती है। चींटी, दीमक, मधुमक्खी आदि का उदाहरण स्पष्ट है। एक नीतिकार ने तो यहाँ तक लिखा है कि "बुद्धिमान मनुष्यों को जीवन अनंत मानते हुए विद्या और अर्थ का चिंतन करना चाहिए।

इसमें कोई संदेह नहीं कि आज के अर्थ प्रधान युग में सामान्य मनुष्य को अपना जीवन सुचारु रूप से निर्वाह करने के लिए अर्थ संग्रह करना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य हैं। आज जीने का अधिकार भी उन्हें ही है, जो आर्थिक दृष्टि से संपन्न हैं, क्योंकि परिवार का भरण-पोषण, बच्चों की शिक्षा, दीक्षा, सभी तो अर्थ साध्य हैं। घर में किसी के बीमार पड़ जाने पर आज की महँगी चिकित्सा-पद्धति और जीवन-निर्वाह का खर्च गरीब मनुष्य वहन नहीं कर सकता और इसीलिए उसे अकाल मृत्यु का ही वरण करना पड़ता है।

अर्थ संग्रह करना आवश्यक है, किंतु स्मरण रहे इसमें स्वामित्व की भावना न हो। कुछ भी हम उपार्जन करें, संग्रह करें उस पर मालिकाना हक न समझकर समाज के एक साझीदार संरक्षक का अधिकार ही समझना चाहिए। उपार्जित एवं संग्रह की गई संपत्ति पर हमारे सहित संपूर्ण समाज का अधिकार समझना आवश्यक है। ऐसी स्थिति में आवश्यकता पड़ने पर संगृहीत धन समाज के हित में खर्च करने में कंजूसी न बरती जाए। वेद में आदेश है कि "सौ हाथों कमा और हजार हाथों दान कर दे।" मनुष्य अर्थोपार्जन करे, धन संग्रह करे, किंतु समाज के हित में, गिरे हुओं को उठाने, असहायों की सहायता करने में, जरूरतमंदों के लिए उन्मुक्त हृदय से खर्च कर दे।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

खेद है आज लोगों में इस भावना का ह्रास हो गया है। लोग उपार्जित संगृहीत धन पर अपना ही स्वामित्व समझते हैं। इसका अर्थ है उस संपत्ति का उपयोग वे स्वयं अथवा उनके निजी व्यक्ति ही कर सकते हैं। इस तरह का स्वामित्व चाहे किसी व्यक्ति का हो या किसी परिवार, वर्ग विशेष या किसी संस्था का ही क्यों न हो, हेय एवं हानिकारक है। इस तरह के स्वामित्व का जो परिणाम होता है, उसके बारे में महात्मा गांधी ने लिखा है—"धनवानों के यहाँ आवश्यक वस्तुएँ भरी पड़ी रहती हैं, पड़ी-पड़ी सड़ा करती हैं, किंतु उन्हीं के अभाव में दूसरे करोड़ों लोग बेहाल रहते हैं, भूखे मरते हैं, जाड़े में ठिठुरते हैं, खुली धरती पर सोते हैं। करोड़पति, अरबपति बनना चाहते हैं, तो भी वे संतुष्ट नहीं होते दूसरी ओर लोगों को भर पेट भोजन नहीं मिलता।"

इसी तरह के स्वामित्व से ही मानव जाति आज संघर्षों के दौर से गुजर रही है। संपत्ति पर इस मालिकाना हक से ही परस्पर की लूट-खसोट, लड़ाई-झगड़े, संघर्ष, क्रांतियों का प्रादुर्भाव होता है। आज के युग में पूँजीपति और सर्वहारा मजदूर वर्ग का महत्त्वपूर्ण संघर्ष दूषित स्वामित्व की भावना पर आधारित है।

हम जो कुछ उपार्जन करें, संग्रह करें उस पर समाज का हक मानकर चलें, आवश्यकता पड़ने पर उसे समाज के हित में लगा दें, तो फैली हुई असमानता, आर्थिक असंतुलन जल्दी ही दूर हो जाएँ और किसी को अभाव में भूखे नंगे रहकर न मरना पड़े।

जो कुछ उपार्जन किया जाए, उसके बदले पर्याप्त श्रम अवश्य किया जाना चाहिए। प्रत्येक मनुष्य को प्राप्त वस्तु सामग्री संपत्ति आदि का मूल्य श्रम के रूप में चुकाना आवश्यक है। जो बिना श्रम किए ही वस्तुओं का उपभोग करता है, अपने भंडार, तिजोरी भरता है वह शोषक है, क्योंकि बिना श्रम का मूल्य चुकाए वस्तु-पदार्थ उत्पन्न नहीं होते। किसी न किसी को तो श्रम करना ही पड़ता है। श्रम कोई दूसरा करे और उससे उत्पादित सामग्री का उपभोग अन्य व्यक्ति करे तो यह एक बहुत बड़ा नैतिक और सामाजिक अपराध है। प्राप्त वस्तुओं के बदले हम श्रम का मूल्य चुकाने लगेंगे, तो समाज में किसी वस्तु का अभाव नहीं रहेगा, सबको बराबर मिलेगा, क्योंकि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

श्रम में किसी का हक छीनने का नियम नहीं, वरन् अपना हक अपने पुरुषार्थ से पाने का नियम है। अतः श्रम हमारी जीवन-पद्धति का अंग बन जाना चाहिए। हम उसे ही संग्रह करें, उसका ही उपभोग करें, जिसका मूल्य श्रम के रूप में हमने चुका दिया है।

परिग्रह वस्तु संग्रह, उपयोग का संबंध अनियमित भोग और फिजूलखर्ची से नहीं है। वर्तमान परिस्थितियों में जीवन-निर्वाह का सीधा, सच्चा, सादगीपूर्ण मार्ग जो बुद्धि सम्मत हो, उसी पर हमें चलना चाहिए। अपरिमित भोगों की तृप्ति और वासना तथा विलासिता को अपनाकर पदार्थों का मनमाना उपभोग करना अनैतिक है। चाहे हमारे पास कितनी ही सामग्री क्यों न हो, लेकिन उसे समाज की धरोहर मानकर जीवन निर्वाह के लिए अत्यावश्यक कार्यक्रमों में ही उसका उपभोग किया जाना चाहिए। फिजूलखर्ची के रूप में समाज की संपदा, जिसके हम संरक्षक मात्र हैं; उसे नष्ट-भ्रष्ट करने का, उड़ा देने का हमें अधिकार नहीं है। यह किसी से नहीं छुपा है कि व्यसन, विलासिता और शेखीखोरी पर खर्च होने वाले बड़े धन को बचाकर उससे अनेक असहाय गरीब लोग, भूखी नंगी मानवता की रोटी, कपड़ा और रहने को मकान दिये जा सकते हैं।

अमर्यादित संग्रह, दूसरे का हक छीनकर अपना घर भरने की प्रवृत्ति, किसी भी तरह अपनी संपत्ति बढ़ाने की आदत मनुष्य की बहुत बड़ी कमजोरी है। इस तरह के लोगों को अपने स्वयं के तथा अपने बेटे-पोतों के भविष्य की भारी चिंता होती है। वे पूर्णतया भविष्य के प्रति अविश्वस्त रहते हैं और जितना अपना घर भरा जा सके, उसे भरने के लिए प्रयत्नरत रहते हैं। इस अनैतिक मनोवृत्ति का आधार "ईश्वर पर अविश्वास" ही होता है। जिसे संसार के व्यवस्थापक परमात्मा पर विश्वास नहीं, जिसे अपने पुरुषार्थ और शक्ति का बोध नहीं ऐसा ही व्यक्ति अपने तथा अपने बच्चों के भविष्य के प्रति शंकालु रहता है और अमर्यादित परिग्रह करता है। आवश्यकता इस बात की है कि स्वार्थ, तृष्णा से प्रेरित होकर किए जाने वाले संग्रह से बचा जाए, इसे ही शास्त्रकारों ने पाप की संज्ञा दी है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आज के युग में जिसमें जीवन प्रणाली बड़ी क्लिष्ट हो गई है, समाज व्यवस्थाएँ बहुत कुछ बदली जा रही हैं, न्याय और सच्चाई के साथ, नैतिक मर्यादाओं में रहते हुए संपत्ति सामिग्री एकत्रित करना, परिग्रह करना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है जन सामान्य के लिए, किंतु उस पर निजी मालिकाना हक की भावना न रक्खी जाए। प्राप्त सामिग्री को समाज की संपत्ति मानकर आवश्यकता पड़ने पर उसे समाज के हक में लुटा देने में संकोच न रक्खा जाए। सामिग्री के परिग्रह का आधार किसी का शोषण, उत्पीड़न या हक छीन लेना न होवे, वरन् उपभोग किए जाने वाली एवं संगृहीत सामिग्री के बदले पूरा-पूरा मूल्य चुकाया जाए श्रम के रूप में। संगृहीत संपदा को अमर्यादित भोग-विलास, फिजूलखर्ची में नष्ट न किया जाए, वरन् सरल, सीधे, सादे जीवन निर्वाह का आधार माना जाए। स्वार्थ तथा तृष्णा से प्रेरित होकर किए जाने वाले परिग्रह से बचा जाए।

अपरिग्रह की उत्कृष्ट स्थिति जिसमें प्रतिदिन की आवश्यकताओं को उसी दिन पूर्ण करके, दूसरे दिन के लिए कुछ भी संग्रह न रखना संत महात्माओं का महान् गुण है। यदि समाज में इस मनोवृत्ति की वृद्धि हो, अपनी दैनिक आवश्यकताओं से अधिक का संग्रह न किया जाए तो किसी तरह की विषमता न रहे। लेकिन यह एक व्यक्ति की नहीं संपूर्ण समाज की मनोवृत्ति हो। उत्पादन संग्रह और वितरण की व्यवस्था व्यक्तिगत न होकर समाजगत हो। इन तरीकों से मानव जाति में फैली अनेक विषमताएँ शीघ्र ही दूर हो जाएँ। बापू ने कहा था—"कंगाल को भी पेट भरने का हक है समाज में। समाज का कर्त्तव्य है कि उसे हक हासिल करा दे। इसके लिए पहला कदम उन धनवानों को उठाना चाहिए जो 'अत्यंत' परिग्रह रखते हैं। यदि संसार के समस्त धनपति ऐसा त्याग कर सकें तो गरीबों का भी सहज ही पेट पालन होने लगे।"

पूर्ण परिग्रह मनुष्य की सर्वोत्कृष्ट सद्भावना का प्रतीक है। इसे लक्ष्य मानकर चलना चाहिए। व्यवहार में यदि अभी उतना संभव न हो तो कम से कम इतना तो करना ही चाहिए कि अनीतिपूर्वक अनावश्यक संग्रह न किया जाए। जो कमाया जाए, उसे केवल उचेत आवश्यकताओं में ही व्यय किया जाए और साथ ही समाज को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सुविकसित बनाने के लिए, पिछड़ों को ऊँचा उठाने के लिए अपनी आय का एक बड़ा अंश नियमित रूप से दान करते रहा जाए।

● धन व्यक्ति का नहीं सारी प्रजा का

नासिरुद्दिन दिल्ली की गद्दी पर बैठा तो पर वैभव और ऐश्वर्य भी उसकी ईश्वर निष्ठा, सादगी, सिद्धांतप्रियता और सरलता को मिटा न सका। होता यह है कि जब किसी को कोई उच्चाधिकार मिलता है, तो भी भले ही कार्य प्रजा और समाज की सेवा और भलाई का हो वह तो अपना स्वार्थ-साधन करने लगता है, अहंकार पूर्वक वर्ग हित का ध्यान भूल जाता है।

उन सबके लिए नासिरुद्दीन का जीवन एक पाठ है। उससे शिक्षा मिलती है कि बड़प्पन मनुष्य की आदर्श भावनाओं और सच्चाई पूर्वक कर्त्तव्य परायणता में है दर्प और स्वार्थ-साधन में नहीं।

नासिरुद्दीन गद्दी पर बैठे तब भी उनकी धर्म पत्नी को भोजन अपने हाथ से ही पकाना पड़ता था। राजा स्वयं उन्हीं के हाथ का भोजन करता। उस भोजन में न तो बहुत विविधता होती न मिर्च मसाले। सीधा सरल औसत दर्जे का भोजन बनता और राज-परिवार उसे ही ग्रहण करता। यद्यपि राजकोष और धन की कमी न थी। नासिरुद्दीन चाहते तो राजसी ठाठ-बाट का भोजन भी पकवाते। दस-बीस रसोइये भी रख लेना उनके लिए पलक मारने की तरह सरल था। तो भी सरल सम्राट् ने प्रदर्शन नहीं किया, अपने आपको भी सामान्य नागरिक जैसा ही प्रस्तुत किया। अपने काम वह स्वयं अपने हाथ से करते तो बेगम को क्यों न वैसा ही जीवन बिताना पड़ता ?

सामान्य जीवन में जो कठिनाइयाँ रहती हैं। उनका अभ्यास उन्हें भी करना पड़ा। इससे उन्हें प्रजा का यथार्थ हित समझने का अवसर मिला। प्रजा भी ऐसे नेक राजा से बड़ा स्नेह रखती। संसार कैसा भी हो, लोग आदर्श, सच्चे और ईमानदार का सम्मान और प्रतिष्ठा करते हैं, भले ही वह छोटा ही आदमी क्यों न हो ? अहंकारी और धूर्त लोग चाहे कितने ही वैभवशाली क्यों न हों, हृदय से कोई भी सम्मान नहीं देता।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

गर्मी के दिन थे। इन दिनों गर्मी तो होती ही है, लू भी चलती है। बेगम एक दिन भोजन बना रही थी कि बाहर से हवा का झोंका आया, लपट उठी और उससे उनका हाथ जल गया। वे बहुत दुःखी हुई। आँखें भर आई, आँसू बहने लगे।

नासिरुद्दीन भोजन के लिए आए तो बेगम ने विनीत भाव से पूछा "मुझे अकेले सब काम करने पड़ते हैं, उससे बड़ी मुश्किल पड़ती है, आपके पास इतना सारा राज्य, कोष और वैभव है क्या हमारे लिए भोजन पकाने वालों की भी व्यवस्था नहीं कर सकते ?

चिंतनशील नासिरुद्दीन गंभीर हो गया। उसने कहा बेगम ! आपकी इच्छा पूरी की जा सकती है, पर उसका एक ही उपाय है कि हम अपने सिद्धांतों से डिगें, बनावट और बेईमानदारी का जीवन जिएँ। यह धन जो तुम देखती हो, वह मेरा नहीं सारी प्रजा का है, मैं तो उसका मात्र व्यवस्थापक हूँ। व्यवस्थापक के लिए जितनी सुविधाएँ और पारिश्रमिक चाहिए, हम उतना ही लेते हैं, अब आप ही बताइए अतिरिक्त व्यवस्था के लिए अतिरिक्त धन कहाँ से आए ? फिजूलखर्ची न तो मेरे हित में है और न ही प्रजा के हित में। फिर वैसी व्यवस्था कैसे की जा सकती है ?

नासिरुद्दीन की दृढ़ता और सिद्धांतप्रियता के आगे बेगम को चुप रह जाना पड़ा। इससे वह असंतुष्ट नहीं वरन् अपने पति में सच्चे देवत्व के दर्शन कर प्रसन्न ही हुई।

जब तक राजा रहा नासिरुद्दीन ने कभी भी वैभव का जीवन नहीं बिताया। अपने अतिरिक्त व्यय की व्यवस्था वह अतिरिक्त परिश्रम से करता था। अवकाश के समय सिली टोपियाँ, लिखी हुई कुरानों की बिक्री से जो धन मिलता था, नासिरुद्दीन उसे ही काम में लेता था। इस तरह उसने अधिकारी और प्रजा के बीच समन्वय का अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया।

गाँधी जी द्वारा प्रतिपादित 'ट्रस्टीशिप' की भावना के साथ सुसंस्कृत, संयमित समाज-अभिमुख जीवन जिएँ और सभी लोग संयम, श्रमशीलता तथा संतुलित जीवन क्रम अपना लें तो व्यक्ति एवं समाज साथ-साथ समृद्ध संपन्न सुखी रह सकते हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

धन स्वयं में एक माध्यम भर है। वह एक महत्त्वपूर्ण साधन है। किंतु तभी जब उसका सदुपयोग किया जाए। जब धन के उपयोग की नहीं उपभोग की दृष्टि बन जाती है, तो वही धन ज्वाला बन जाता है, जिसमें शरीर, मन, मेधा, व्यक्तित्व, चरित्र सभी कुछ स्वाहा होता चलता है। इसलिए आवश्यकता उपभोग की प्रवृत्ति से विरत रहने और श्रेष्ठ उपयोग की दिशा में सक्रिय रहने की है। ऐसी भावभूमि रखने पर सहज सरल जीवन क्रम स्वतः निर्धारित हो जाता है और सफलताएँ उपलब्ध होती चली जाती हैं।

❐ ❐

श्रेष्ठता का आधार धन को न मानें

पैसे में रचनात्मक शक्ति है, उसके द्वारा कितने ही उपयोगी कार्य हो सकते हैं और सदुद्देश्यों की पूर्ति में सहायता मिल सकती है। पर साथ ही यह भी न भूल जाना चाहिए कि उसकी मारक शक्ति उससे भी बढ़ी-चढ़ी है।

धन का महत्त्व तभी है जब वह नीतिपूर्वक कमाया गया हो और सदुद्देश्यों के लिए उचित मात्रा में खर्च किया गया हो। अनीति से कमाया तो जा सकता है, जिन लोगों के द्वारा वह कमाया गया है, जिनका शोषण या उत्पीड़न हुआ है, उनका विक्षोभ सारी मानव-सभ्यता के लिए घातक परिणाम उत्पन्न करता है। शोषित एवं उत्पीड़ित व्यक्ति जब देखते हैं कि उन्हें ठगा या सताया गया है और जिसने सताया या ठगा है, वह मौज कर रहा है, तो उनका मन आस्तिकता एवं नैतिकता के प्रति विद्रोह भावना से भर जाता है।

यह विक्षोभ धर्म और ईश्वर पर से विश्वास डिगा सकता है और उस स्थिति में पड़ा हुआ मनुष्य अपने ढंग से, अपने से छोटों के साथ दुर्व्यवहार आरंभ कर सकता है। इस प्रकार बुराई की बेल बढ़ती है और उसके विषैले फल संसार में अनेक प्रकार के

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

दुष्परिणाम पैदा करते हैं। इस प्रकार फैली हुई दुष्प्रवृत्तियों का कोई परिणाम उस पर भी हो सकता है, जिसने अनीतिपूर्वक किसी का शोषण किया था।

बुराई से केवल बुराई बढ़ती है। धन यदि बुरे माध्यम से कमाया गया है, तो उसका खर्च भी उचित रीति से नहीं हो सकता। जिसने पसीना बहाकर गाढ़ी कमाई से पैसा कमाया है, उसे खर्च करते समय दर्द लगेगा और बारबार सोचेगा कि इसे किस कार्य के लिए कितनी मात्रा में खर्च करना उचित है ? किंतु जिसने बिना परिश्रम धूर्ततापूर्वक कमाया है, उसके लिए निरर्थक कामों में बहुत कुछ खर्च कर डालना भी बुरा न लगेगा। सच बात तो यह है कि हराम की कमाई आडंबर बनाने, ढोंग रचने और विलासिता के प्रसाधन जमा करने में ही खर्च होती है। अनेक व्यसन ऐसे लोगों के पीछे पड़ जाते हैं, जिनमें वह धन तो बर्बाद होता ही है, साथ ही शरीर और मन को अस्त-व्यस्त कर देने वाली अनेक बुराइयाँ भी अपने भीतर पैदा हो जाती हैं, जिनके कारण अनेक विपत्तियों और व्यथाओं का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार वह अनुचित कमाई अपना क्षणिक चमत्कार दिखाकर अंततः मनुष्य के भविष्य को अंधकारमय बनाने वाली ही सिद्ध होती है।

धन कमाने के लिए उचित प्रयत्न करना सराहनीय है। उपार्जन और उत्पादन के लिए प्रयत्नशील रहने से व्यक्ति और समाज की क्षमता बढ़ती है। प्रगति का पथ-प्रशस्त करने वाले साधनों में एक महत्त्वपूर्ण वस्तु धन भी है। इस धन के उपार्जन का प्रयत्न करने में बुराई नहीं प्रशंसा की बात है। इससे राष्ट्र की आर्थिक क्षमता बढ़ती है और उसमें भौतिक उन्नति की संभावना बढ़ती है। भौतिक उन्नति भी आध्यात्मिक उन्नति में सहायक होती है। दरिद्रता मनुष्य की कोमल भावनाओं और मानवोचित आकांक्षाओं को कुंठित ही करती रहती है। इसलिए दरिद्रता को सदा हेय ठहराया गया है। धन को लक्ष्मी मानकर उसकी पूजा करने की प्रथा से यह स्पष्ट है कि वह स्वागत योग्य है—घृणास्पद नहीं।

धन की विषयक शक्ति सर्वविदित है। इसलिए गृही, विरक्त सभी धन-प्राप्ति की आकांक्षा मन में धारण किए रहते हैं और उसके लिए

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अपने-अपने ढंग से प्रयत्न भी करते रहते हैं। धन पाकर बाल-वृद्ध सभी को प्रसन्नता होती है। यह उचित भी है, क्योंकि सभी श्रेणी के व्यक्ति अपनी-अपनी सुख-सुविधा के साधन धन द्वारा हीं प्राप्त कर सकते हैं। विचारणीय प्रश्न इतना ही है कि धन अनीतिपूर्वक कमाया हुआ न हो। यदि वह अनुचित अन्यायोपार्जित होगा, बिना परिश्रम के अनायास ही प्राप्त कर लिया गया होगा तो वह कमाई श्रेयस्कर न होगी, वरन् जिससे कमाया है, उसे और जिसने कमाया है, उसे शोक-संताप देती हुई अंततः खेदजनक परिणाम प्रस्तुत करती हुई विनष्ट होगी।

अनुचित मार्ग से आया हुआ धन मोज-मजा करने की प्रवृत्ति उत्पन्न करता है। उस मार्ग पर थोड़ा भी झुकाव होने से बड़ी से बड़ी पूँजी कुछ ही दिनों में समाप्त हो जाती है। खर्च करने के अगणित साधन फँसे पड़े हैं। उनमें कुछ ही समय में चाहे जितना पैसा उड़ाया जा सकता है। विलास प्रसाधनों में अपव्यय की आदत जिन्हें पड़ जाती है, उन्हें यह भी एक आवश्यकता जैसी प्रतीत होने लगती है और फिर उस आदत को पूरा करने के लिए बहुत धन की आवश्यकता बनी रहती है। ऐसे लोग कर्ज लेकर दूसरों को धोखा देकर या जीवन को सुव्यवस्थित रखने वाली छोटी संचित पूँजी को नोच-नोचकर अपनी उड़ाऊ आदतों को पूरा करते हैं और धीरे-धीरे अपराधी प्रवृत्तियाँ अपनाकर ऐसे दुष्कर्म करने पर उतर आते हैं, जिनका परिणाम सर्वनाश के अतिरिक्त कुछ और नहीं हो सकता।

आज मनुष्य का मूल्यांकन उसके धन से किया जाता है। किसी व्यक्ति का परिचय पूछने पर आमतौर से उसकी कमाई और संपत्ति का वर्णन करते हैं और उसी आधार पर किसी का छोटा या बड़ा होना माना जाता है। यह दृष्टिकोण गलत है। इस गलती का एक परिणाम यह भी होता है कि लोग किसी भी प्रकार धनी बनना चाहते हैं और अनुचित तरीके अपनाने में भी नहीं हिचकते। कितने ही व्यक्ति जो वस्तुतः धनी नहीं हैं, दूसरों की आँखों में धनी प्रतीत होने के लिए आडंबर बनाते हैं और उन खर्चीले आडंबरों में बेचारों की आर्थिक कमर टूट जाती है। भेद खुलने पर उपहास होता है, सो अलग।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कंजूसी अपने ढंग की दुष्प्रवृत्ति है। पैसे को रोककर-दबाकर रखना उसके लाभ से समाज को वंचित करने के समान है। सड़क पर चलने के लिए कोई व्यक्ति उसे रोककर बैठ जाए तो दूसरों को इससे असुविधा ही होगी। नदी में बहने वाला जल अनेकों का हित साधन करता है, पर यदि कोई उस प्रवाह को रोक डाले तो उससे कहीं सूखा पड़ने और कहीं बाढ़ आने का खतरा रहेगा। इसी प्रकार रुका हुआ धन अनेकों की आजीविका का मार्ग बंद कर देता है और जहाँ रुकता है, वहाँ बाढ़ जैसी बरबादी उत्पन्न होती है। कंजूस उसे न अपने काम लाता है और न दूसरों के काम आने देता है। ऐसी दशा में वह संचय एक प्रकार का दुर्भाग्य एवं अभिशाप ही सिद्ध होता है। चोर-डाकुओं की उत्पत्ति का एक कारण कंजूसों का लालचीपन भी होता है। मधुमक्खी की तरह उन्हें अपनी कमाई दूसरों के हाथ गँवाने का ही पश्चात्ताप हाथ लगता है।

विद्वानों का कथन है कि मनुष्य की श्रेष्ठता और निकृष्टता दो कसौटियों पर परखी जा सकती है और वे हैं—(१) धन (२) नारी। इन दो के संबंध में जिनका दृष्टिकोण धर्मबुद्धि से संचालित होता है, जो इन दो के प्रलोभनों के आगे ईमानदार बने रहते हैं वस्तुतः वे ही खरे आदमी हैं। जो परीक्षा की अग्नि में तपकर खरा सिद्ध हो सके, उसी को प्रामाणिक माना जाता है। धर्मात्मा और सज्जन वही व्यक्ति कहा जा सकता है, जिसने अनीति से उपार्जित, बिना परिश्रम का पैसा छुआ न हो। जिसे ईमानदारी की कमाई में ही संतोष है, उसे संत कहा जा सकता है। जिसकी आँखें युवा नारी में अपनी वयस्क बहिन या पुत्री की छाया देखती हैं और नर-नारी की आत्मा में जिसे अंतर नहीं दिखता उसी को ब्रह्मचारी या विरागी कह सकते हैं।

धन का जहाँ जीवन के भौतिक विकास में महत्त्वपूर्ण उपयोग है, वहाँ आध्यात्मिक जीवन में एक भारी उपयोग यह है कि वह मनुष्य की वास्तविकता को परखकर रख देता है। लोभ को पाप का मूल माना गया है। अनीति की कमाई एवं अनुपयुक्त अपव्यय किसी भी मनुष्य के घृणित एवं पतित होने का सबसे बड़ा प्रमाण ही हो सकता है, भले ही वह लोगों की आँखों को झुठलाने के लिए कितना ही बड़ा आडंबर ओढ़े क्यों न बैठा हो ? धर्मात्मा की प्रथम परीक्षा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यह है कि वह परिश्रम की कमाई पर संतोष करे, एक-एक पाई का सदुपयोग करे और जो बचे उसे लोकहित के लिए लगाता रहकर स्वयं अपरिग्रही बना रहे।

पैसा जहाँ रुकता है वहाँ सड़ता है। उसकी बदबू चारों और फैलती है। कीचड़ या गंदी चीजों का ढेर लगने से उसमें सड़न पैदा होती है और उस गंदगी की दुर्गंध समीपवर्ती सब लोगों को दुःख देती है। संग्रही व्यक्ति भले ही अमीर या पूँजीपति के नाम से पुकारे जाएँ, वस्तुतः वे समाज के सम्मुख एक बुरा उदाहरण ही प्रस्तुत करते हैं। उनकी नकल करने की घुड़दौड़ में कितने दुर्बल बुद्धि मनुष्य अपना मानसिक संतुलन खो बैठते हैं और किसी प्रकार अमीर बनकर उन तथाकथित बड़े आदमियों जैसा ऐश्वर्य भोगना चाहते हैं। इस अवांछनीय घुड़दौड़ को जन्म देने वाले वे लोग हैं, जो अपना व्यक्तिगत वैभव बढ़ाकर सर्वसाधारण की आँखों में चकाचौंध पैदा करते हैं और जल्दी अमीर बनने या असीम सुख-साधन भोगने की कामनाओं को भड़काते हैं। उदाहरण को सबसे बड़ी शिक्षा पद्धति माना गया है। अमीरी का ठाट-बाट प्रकारांतर से लोगों को यही सिखाता है कि उन्हें भी इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इस घुड़दौड़ में शामिल हो जाना चाहिए। अविकसित लोग सही तरीके से उतना उपार्जन करने की स्थिति में नहीं होते, उन्हें उतना धैर्य भी नहीं होता। इसलिए आमतौर से धन और ऐश्वर्य की लालसा में निमग्न व्यक्तियों को अनीति का मार्ग ही अपनाना पड़ता है। आज यही घुड़दौड़ मची हुई है और हमारा नैतिक स्तर बुरी तरह गिरता हुआ चला जा रहा है।

जो अधिक उपार्जन कर सकते हैं, उनका उत्तरदायित्व है कि सामान्य सामाजिक स्तर से बढ़-चढ़कर आडंबर न बनावें, सादगी से रहें और उसी प्रकार से जीवन यापन करें जैसा कि उस देश के सामान्य नागरिकों को बिताना पड़ता है। थोड़ा अंतर रह सकता है, पर वह उतना ही होना चाहिए, जितना हाथ की पाँचों अंगुलियों की लंबाई में थोड़ा-सा अंतर रहता है। बहुत भारी राजा और रंक जैसा अंतर सामाजिक रहन-सहन में रहना केवल द्वेष की आग ही भड़का सकता है और उससे अनाचार ही उत्पन्न हो सकता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अधिक उपार्जन की क्षमता की सार्थकता एवं प्रशंसा इस बात में है कि उसका उपयोग अपने से पिछड़े हुए लोगों को ऊँचा उठाने में किया जाए। दान इन लोगों का एक नैतिक कर्त्तव्य है, जो अपने आवश्यक खर्चों के अतिरिक्त कुछ अधिक कमा या बचा सकते हैं। अपरिग्रह एक धर्म-कर्त्तव्य माना गया है। जितनी अनिवार्य आवश्यकता है उतने से अधिक का संचय परिग्रह रूपी पाप की श्रेणी में गिना जाना चाहिए। किसे कितनी आवश्यकता है इसका निर्णय उस समाज की मध्यम श्रेणी के स्तर के आधार पर किया जाना चाहिए। अन्यथा कोई व्यक्ति विलासिता को भी अपनी 'आवश्यकता' सिद्ध करने लगेगा।

आर्थिक उपार्जन की क्षमता का होना प्रशंसनीय है। पर उस प्रशंसा की सार्थकता तभी है, जब वह व्यक्तिगत विलासिता बढ़ाने की अपेक्षा लोक कल्याण के काम आवे। धन को शक्ति का प्रतीक माना गया है, उसकी लक्ष्मी के रूप में पूजा भी की जाती है। वे मान्यताएँ तभी सत्य मानी जा सकती हैं, जब उसके उपार्जन एवं व्यय पर धर्म बुद्धि का समुचित नियंत्रण बना रहे। अनियंत्रित उपार्जन एवं खर्च दोनों ही पतन का कारण बनते हैं, उसके कारण व्यक्ति का नाश और समाज का पतन होता है। धन विधायक शक्ति अवश्य है, पर उसकी विनाशक शक्ति और भी प्रचंड है। धन का अनियंत्रित उपयोग किसी भी समाज का सर्वनाश करने के लिए भयंकर संहारक अस्त्र सिद्ध हो सकता है।

श्रेष्ठता धन से नहीं धन्य कार्यों से

पैसे की अधिकता के कारण ही कोई मनुष्य श्रेष्ठ नहीं माना जा सकता। श्रेष्ठ कार्य ही मनुष्य को श्रेष्ठ बना सकते हैं। यदि पैसे ने आज तक किसी को श्रेष्ठ बनाया हो तो संसार के धनवान् लोग किसी निर्धन को प्रतिष्ठा पाने ही न देते। वे एक के दस खर्च करके समाज की सारी प्रतिष्ठा अपने लिए खरीद लेते।

ऐसा नहीं कि धन प्रतिष्ठा के लिए बाधक है अथवा कोई धनवान् प्रतिष्ठा पा ही नहीं सकता। धनवान प्रतिष्ठा पा सकते हैं किंतु वे जिनके धनोपार्जन के साधन पवित्र एवं उपयुक्त होते हैं और जिनका धन समाज सेवा के किन्हीं श्रेष्ठ कार्यों पर खर्च होता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

धन को धनवान होने के लिए कमाना और रखते जाना अथवा केवल अपने पर ही खर्च करना कोई अर्थ नहीं रखता। जो समाज के बीच धन कमाता और जोड़ता रहता है। जिसका पैसा आवश्यकता पड़ने पर पीड़ितों अथवा समाज सेवा के काम में नहीं आता वह वास्तव में धनवान नहीं, धन का चोर है। धन किसी के अधिकार में क्यों न हो वह समाज का ही है क्योंकि उसकी प्राप्ति समाज से, समाज की सहायता से ही हुई है। उस धनवान को श्रेष्ठ ही कहा जाएगा, जो समाज के धन को अपनी सुरक्षा में रखकर बढ़ाता और समयानुकूल उसका उपयुक्त भाग समाज-सेवा के कार्यों में खर्च करता है। ऐसे धनवान श्रेष्ठियों को समाज का खजांची ही माना जाएगा और वे अपने पद एवं कार्य के अनुरूप प्रतिष्ठा के अधिकारी होंगे।

तन, मन, धन, तीन उपकरणों में से जो व्यक्ति कोई भी उपकरण समाज के श्रेष्ठ कामों में नियोजित करता है, उसे एक श्रेष्ठ मनुष्य ही कहा जाएगा। केवल धनवान्, बलवान् अथवा महामना मात्र होने से कोई श्रेष्ठता का अधिकारी नहीं हो सकता। जिसका धन, बल और महामानवता समाज के किसी काम नहीं आती, वह अपने काम में कितना ही श्रेष्ठ एवं महान् बनता रहे वस्तुतः समाज उसे श्रेष्ठ मानने और श्रेष्ठता में कृपणता ही बरतेगा।

संसार में आज ऐसे लोगों की बहुतायात होती जा रही है, जो पैसे को परमात्मा मानकर पूजते हैं और आशा करते हैं कि पैसे के कारण उन्हें भी पूजा जाए, किंतु उनकी यह इच्छा कभी पूरी नहीं हो सकती। इस आर्थिक युग में भी समाज केवल पैसे के कारण किसी को तब तक प्रतिष्ठा नहीं दे सकता, जब तक वह अथवा उसका पैसा समाज में श्रेष्ठ कार्यों का संपादन नहीं करते।

अनेक लोग तो पैसे के इतने भक्त होते हैं कि उनका पैसा समाज सेवा के कार्यों में खर्च होना तो दूर उनके स्वयं के जीवन विकास में भी खर्च नहीं हो पाता। धन को कमाना और केवल जमा करना ही उनका ध्येय होता है। यदि वे अपने पैसे को अपने विकास, अपने परिवार की उन्नति और बच्चों को विकसित बनाने में ही खर्च करते रहें, तब भी धन का कुछ अंश किसी न किसी बहाने समाज में आता रहे और एक दिन ऐसा आ सकता है कि वे और उनके

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बच्चे विकसित होकर धन कमाने और उसका सदुपयोग कर सकने की वृद्धि पा जाएँ।

जो केवल धन कमाता और आगामी पीढ़ियों के लिए ही जमा करता रहता है, वह अपने उस धन की बदौलत धनवान् किस प्रकार माना जा सकता है ? वह धन उनका होता ही कहाँ है, वह तो वास्तव में उनके उन उत्तराधिकारियों का होता है, जिनके लिए वे उसे जमा करते रहते हैं। वास्तव में हमारा धन तो वही है, जिसका हम ठीक-ठीक सदुपयोग कर सकते हैं। जो धन हमारे अथवा समाज के किसी काम नहीं आता वह निरर्थक ही कहा जाएगा। ऐसे निरर्थक धन के बल पर यदि कोई समाज में श्रेष्ठता पाने की इच्छा करता है तो उसकी इच्छा कभी पूरी नहीं हो सकती।

श्रेष्ठता धन के बल पर नहीं बल्कि श्रेष्ठ कामों में फलस्वरूप मिला करती है। रोमन साम्राज्य का स्तंभ 'सिसरो' एक सामान्य स्थिति का व्यक्ति था, किंतु वह अपने पुरुषार्थ एवं विद्या-बुद्धि के बल पर रोमन साम्राज्य का नीति निर्धारक बनकर बड़ी प्रतिष्ठा पा सका। उसकी प्रतिष्ठा से डाह करने वाले एक कुलीन वंशी ने एक दिन कहा—"सिसरो, तुम एक सामान्य कुल के हो, जबकि मैं कुलीन राजवंश का हूँ।" सिसरो ने बड़े सामान्य भाव से उत्तर दिया—"महाशय ! मैं एक सामान्य वंश का हूँ, किंतु मेरे काम के कारण मेरे वंश की गणना कुलीनों में होने लगेगी, जबकि आपके कार्य आपके वंश की कुलीनता समाप्त कर देने वाले सिद्ध हो सकते हैं।" सिसरो की श्रेष्ठता उसके श्रेष्ठ कार्यों पर आधारित थी, जो कि सही श्रेष्ठता थी।

केवल धन देखकर किसी को श्रेष्ठ मान लेना अपनी मानसिक स्थिति का परिचय देना है। ऐसे ही मानसिक दरिद्रों की दी हुई प्रतिष्ठा से प्रोत्साहित होकर अनेक लोग श्रेष्ठता पाने के लिए श्रेष्ठ कामों की ओर ध्यान न देकर हर प्रकार से धन बटोरने में जुट जाते हैं। वे मानते हैं कि श्रेष्ठ कामों के अभाव में केवल धन होने के कारण बुद्धिमान-व्यक्ति उन्हें श्रेष्ठ जरूर नहीं मानेंगे, किंतु समाज में ऐसे दरिद्रों की भी कमी नहीं है, जो उन्हें उनके धन के कारण ही देवता मानकर पूजने लगेंगे। मेरे पास धन होना ही उसके लिए

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

एक बड़ी बात होगी फिर वह चाहे मेरे धन का एक पैसा भी उनके किसी काम न आए।

कहना न होगा कि श्रेष्ठ कार्यों में धन का सदुपयोग न करने वाले धनी उतने दया के पात्र नहीं हैं, जितने कि वे मानसिक निर्धन जो धन देखकर ही किसी को श्रेष्ठ मान लेते हैं और उनकी सम्मान-लिप्सा की पूर्ति में सहायक होते हैं। मनुष्य की श्रद्धा और आदर भावना एक बहुमूल्य वस्तु है। इसको यों ही लुटा देना उचित नहीं। मनुष्य की श्रद्धा एवं आदर भाव का ठीक-ठीक अधिकारी वही है जो स्वयं श्रेष्ठ हो और समाज के लिए कोई श्रेष्ठ कार्य करने में लगा हो, फिर चाहे वह धनी हो या निर्धन।

एडिनवरा का कंगाल लड़का हजार धनवानों से श्रेष्ठ माना जाएगा, जिसने मरण शैय्या पर पड़े होने पर भी अपने भाई के हाथ एक सज्जन व्यक्ति के चार आने पैसे भेजे थे। यह गरीब लड़का जाड़े की रात में दियासलाई का बंडल ले जाकर एक सज्जन से खरीदने की प्रार्थना करने लगा कि उसे कुछ पैसे मिल जाएँ, जिससे वह और उसका छोटा भाई दो दिन से जल रही भूख की ज्वाला शांत कर सकें। लड़के की दशा पर दया खाकर उन सज्जन ने एक आने की एक दियासलाई खरीद ली और बारह आने का एक सिक्का लड़के को देकर बाकी लौटाने को कहा।

लड़के के पास बाकी के पैसे नहीं थे। वह ग्राहक को रोककर बाजार में उसे तुड़ाने चला गया, किंतु जब वह बहुत देर तक वापस न आया तो ग्राहक निराश होकर चला गया। उसने सोचा गरीब लड़का उसका शिलिंग लेकर भाग गया।

शाम को एक दूसरा लड़का उन सज्जन का पता लगाते-लगाते उसके घर गया और चार आने के सिक्के को उन्हें देता हुआ बोला—महाशय, मेरे बड़े भाई ने, जिनसे आपने सबेरे एक दियासलाई खरीदी थी। यह चार आने पैसे आपके पास भेजे हैं और शेष सात आने न भेज सकने के लिए माफी माँगी है। मेरा भाई जिस समय आपका शिलिंग भुनाकर आ रहा था, उस समय रास्ते में सड़क पर एक घोड़े की चपेट में आकर घायल हो गया। उनकी दोनों टाँगें टूट

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

गई हैं। उनके बाकी पैसे और दियासलाइयाँ उसी दुर्घटना में खो गई हैं। वह घर पर चारपाई पर पड़ा है, इसीलिए खुद न आ सका और मुझे आपके पास भेजा है। एडिनवरा की किसी गली में रहने वाला यह निर्धन लड़का अपनी इस चारित्रिक श्रेष्ठता के कारण किसी भी श्रेष्ठजन के पार्श्व में बैठने के सर्वथा योग्य माना जाएगा। उसके पास न तो धन ही था और न अन्य किसी प्रकार का बड़प्पन, किंतु उसके एक ईमानदारी एवं सज्जनता के काम ने उसे इतना श्रेष्ठ बना दिया कि वह उदाहरण के रूप में लोगों के सामने रखा जाता है। उस निर्धन श्रेष्ठ के समय में न जाने कितने लक्षाधिपति एडिनवरा की ऊँची-ऊँची कोठियों में रह रहे होंगे, किंतु उनमें से आज तक किसी एक की भी चर्चा नहीं की जाती। निःसंदेह श्रेष्ठता धन से नहीं श्रेष्ठ कार्यों से ही मिलती है। कार्य कितना ही छोटा क्यों न हो यदि उसके पीछे चरित्र की श्रेष्ठता है, तो किसी भी काम को छोटा नहीं माना जा सकता। इस प्रकार के चरित्र अथवा गुणबोधक न जाने कितने छोटे-छोटे काम किसी सामान्य से सामान्य व्यक्ति को भी श्रेष्ठजनों की सूची में अंकित कर सकने में समर्थ होते हैं।

किसी की श्रेष्ठता का सौभाग्य उसके धन-वैभव के आधार पर न तो मिल सकता है और न दिया जा सकता है। ऐसे हजारों उदाहरण संसार में पाए जा सकते हैं कि एक नौकर अपने मालिक से श्रेष्ठ है, जिसने कि उचित-अनुचित साधनों से प्रचुर धन कमाकर इकट्ठा कर लिया है, किंतु उसका पैसा किसी श्रेष्ठ काम में खर्च नहीं होता, जबकि नौकर अपनी अल्प कमाई में से भी कुछ अंश अपाहिजों की सहायता अथवा एक आध भूखे को भोजन करा देने में खर्च करता हो।

श्रेष्ठ व्यक्ति उसी को कहा जाएगा जो अपने मानवीय गुणों को किसी न किसी रूप में इसी प्रकार प्रकट करे, जिससे समाज अथवा किसी व्यक्ति का हित हो।

क्या वह निर्धन युवक उस धनी पुरस्कार दाता से श्रेष्ठ नहीं कहा जाएगा—जिसने नदी की बाढ़ से टूटते हुए एक पुल पर बनी कोठरी में रहने वाले पहरेदार के परिवार को अपनी जान की बाजी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लगाकर पानी के प्रकोप से बचाया था और पुरस्कार के रूप में दिए जाने वाले सौ रुपए की धनराशि को लेने से इनकारते हुए दाता से कहा था कि उसने पैसे के लिए अपनी जान की बाजी नहीं लगाई थी। यह उसका मानवीय कर्त्तव्य था, जो उसने बिना किसी लोभ लालच से पूरा किया है। यह पैसा इस पीड़ित परिवार को दे दिया जाए, क्योंकि उसको इसकी मुझसे अधिक आवश्यकता है।

ऐसे-ऐसे उदाहरणों के होते हुए भी जो व्यक्ति धन के बल पर श्रेष्ठता खरीदने का प्रयत्न करते हैं, वे नादान ही कहे जाएँगे। अरबों कमा लेने और करोड़ों खर्च करने पर भी श्रेष्ठता तब तक नहीं मिल सकती, जब तक कोई व्यक्ति अपने सत्कर्मों से अपनी पात्रता सिद्ध नहीं कर सकता। उसी पुरस्कारदाता धनी ने यदि धन के लालच में किसी दूसरे को उक्त संकटग्रस्त परिवार को बचाने के लिए प्रोत्साहित करने के बजाय स्वयं ही यथासाध्य प्रयत्न किया होता, तो निश्चय ही वह एक श्रेष्ठ कार्य करता, तब उसका धन उसकी श्रेष्ठता में चार चाँद लगा देता। उसने धन द्वारा परोक्ष रूप में किसी पीड़ित की सहायता करने की कोशिश जरूर की किंतु ऐसा कोई लक्षण व्यक्त नहीं किया कि वह आर्थिक सहायता धनाभिमान से मुक्त मानी जाती।

श्रेष्ठता पाने के भ्रम में धन की लिप्सा से कोई भी व्यक्ति श्रेष्ठ नहीं हो सकता। जो व्यक्ति अपनी स्थिति के अनुसार समाज अथवा व्यक्ति की सेवा करता अथवा अपने किसी काम से उस आंतरिक महानता का परिचय देता है, जो उसकी आत्मा सोई रहने पर संभव नहीं था, तो वह मनुष्यता की उपाधि से पुकारा जाता है, वही व्यक्ति वास्तविक श्रेष्ठता का अधिकारी है। ऐसा गुणी तथा चरित्रवान् व्यक्ति स्वयं भी श्रेष्ठ होता है और दूसरे लोग भी उसे श्रेष्ठ मानते और प्रतिष्ठा करते हैं।

● अर्थोपार्जन के आध्यात्मिक प्रयोग

कुछ लोगों की ऐसी मान्यता है कि धार्मिक व्यक्ति की धन से विरक्ति होनी चाहिए। जहाँ तक आध्यात्मिक आनंद की प्राप्ति का प्रश्न है धन के प्रति अत्यधिक लगाव रखना उचित भी है, किंतु गृहस्थी की सुख-सुविधाओं के लिए, धार्मिक प्रयोजनों की पूर्ति के लिए धन

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अत्यधिक आवश्यक है। धन के बिना न धर्म संभव है न कर्त्तव्य पालन। इस दृष्टि से निर्धनता अभिशाप है। हमारे आध्यात्मिक जीवन में धन का उतना ही महत्त्व है, जितना ईश्वर उपासना का। लक्ष्मी को परमात्मा का वामांग मानते हैं। इसलिए उपासना को तब पूर्ण समझना चाहिए, जब लक्ष्मी-नारायण दोनों की प्रतिष्ठा हो। जहाँ लक्ष्मी नहीं वहाँ का परमात्मा भी बेचैन रहता है। लक्ष्मी रहती है तो परमात्मा की प्राप्ति में सुविधा मिलती है, हमारी मान्यता इस प्रकार की होनी चाहिए।

आर्थिक दृष्टि से मनुष्य दूसरों का गुलाम बने यह न तो उपयुक्त ही है और न परमात्मा की ही ऐसी इच्छा है। उन्होंने अपने प्रत्येक पुत्र को समान साधन दिए हैं, समान क्षमताएँ दी हैं, तो उसका एक ही उद्देश्य रहा है कि आत्म-कल्याण और जीवन यापन में प्रत्येक व्यक्ति आत्म निर्भर रहे। ईश्वरनिष्ठ को निराश्रित होना उचित भी नहीं अपनी आजीविका का प्रबंध उसे स्वयं करना चाहिए।

निर्धनता एक प्रकार की आध्यात्मिक विकृति है, धन न कमाना त्याग का लक्षण नहीं। यह मनुष्य में दैवी गुणों की कमी का परिचायक है। हर व्यक्ति को विशुद्ध धार्मिक भावना से अर्थोपार्जन करना चाहिए। यह क्रिया आत्म-विश्वास के अंतर्गत ही आती है। "पीस, पावर और प्लेन्टी" (शांति, शक्ति और समृद्धि) नामक पुस्तक के रचयिता श्री ओरिसन मार्डन ने लिखा है—"जो दरिद्री होते हैं उनमें न आत्म-विश्वास होता है और न श्रद्धा। लोग अपनी स्थिति बदल सकते हैं, पर उन्हें अपनी शक्तियों पर भरोसा करना आना चाहिए। आशा, साहस और कर्मशीलता के द्वारा कोई भी व्यक्ति श्री संपन्न बन सकता है।"

धन को सुख का साधन मानकर उसे ईमानदारी और परिश्रम के द्वारा कमाया जाए, तो वह आत्म-विकास में भी सहायक होता है। धन प्राप्ति का एक दोष भी है—अनावश्यक 'लोभ'। वित्तेषणा के कारण लोग अनुचित तरीकों से धन कमाना चाहते हैं। बेईमानी के द्वारा कमाया हुआ धन मनुष्य को व्यसनों की ओर आकर्षित करता है। जुआ, सट्टा, लाटरी, नशा, वेश्यावृत्ति में धन का अपव्यय करने वाले प्रायः सभी अनुचित तरीकों से धनार्जन करते हैं। इस प्रकार की

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कमाई मनुष्य की दुर्गति करती है। इस प्रकार का धन हेय कहा गया है और उस धन से निर्धन होना अच्छा बताया गया है।

अर्थोपार्जन में जिन आध्यात्मिक गुणों का समावेश होना चाहिए शास्त्रकार ने उन्हें बड़े अलंकारिक ढंग से प्रस्तुत किया है। लक्ष्मी को देवी मानते हैं। उन्हें कमल पुष्प पर आसीन, ऊपर से फूलों की वर्षा होती हुई दिखाया गया है। कमल पवित्रता और सौंदर्य का प्रतीक है। लक्ष्मी पवित्रता और सौंदर्य अर्थात् ईमानदारी और सच्चाई पर विराजमान हैं। उनका वाहन उल्लू है, उल्लू मूर्खता का प्रतीक है। मूर्खतापूर्ण स्वभाव वाले या अवगुणी व्यक्तियों के लिए यह लक्ष्मी भार स्वरूप, दुःख रूप होती है। यह दिग्दर्शन उनके चित्र में कराया गया है।

मनुष्य किस प्रकार समृद्ध बने इसका आध्यात्मिक विवेचन शास्त्रकार ने स्वयं लक्ष्मी जी के मुखारबिंदु से कराया है। वर्णन भले अलंकारिक हो, पर उसमें जिन सिद्धांतों का समावेश हुआ है, वे अटल है। उनकी उपेक्षा करने से कोई भी व्यक्ति न तो धनी हो सकता है और न उस धन से सुख, शांति और संतोष ही प्राप्त करता है।

एक साधक के प्रश्न का उत्तर देती हुई लक्ष्मी जी कहती हैं—

वसामि नित्यं सुभगे प्रगल्भे दक्षे नरे कर्माणि वर्त्तमाने।
अक्रोधने देव परे कृतज्ञे जितेन्द्रिये नित्यमुद्दीर्ण सत्वे।।

अर्थात्—मैं सुंदर स्वभाव वाले चतुर मधुरभाषी, कर्त्तव्यनिष्ठ, क्रोधहीन, भगवत्परायण, कृतज्ञ, जितेंद्रिय और बलशाली लोगों के पास नित्य निवास करती हूँ।

धन का कमाना, उसे बचाकर रखना और उससे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति उपर्युक्त गुणों पर आधारित हैं। उनमें से एक भी उपेक्षणीय नहीं। रोजगार करें या नौकरी, खेती करें या अन्य कोई रोजगार चतुरता, विनम्रता, कर्त्तव्य परायणता आदि सभी गुण चाहिए। बात-बात पर झगड़ा करने, कर्त्तव्य की उपेक्षा करने या अपने सहयोगियों से मिलकर न रहने से न तो रोजगार पनप सकता है और न कोई अधिक समय तक नौकरी में ही रख सकता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लक्ष्मी के दूसरे कृपापात्र परिश्रमी व्यक्ति होते हैं। जब कोई व्यक्ति उद्योग-धन्धा, व्यापार या परिश्रम त्याग देता है तो उसके पास की लक्ष्मी नाराज होकर लौट जाती है। **'उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः'** की कहावत प्रसिद्ध है। धनाभाव होना यह बताता है कि वह परिश्रम नहीं कर रहा है। उद्योगी और परिश्रमी व्यक्ति सदैव परिश्रमी देखे जाते हैं।

परिश्रम और उद्योग करते हुए अनैतिक रास्तों का अनुकरण भी नहीं करना चाहिए, अन्यथा ऐसे बखेड़े, झगड़े या आपत्तिपूर्ण अवसर आ जाएँगे, जिससे बढ़ी हुई आय कुछ ही दिनों में नष्ट हो जाएगी। एक अन्य सूक्त में कहा है—

स्थिता पुण्यवता गेहे सुनीति पथवेदिनाम्।
गृहस्थानां नृपाणां वा पुत्रवत्पालयामि तान्।।

अर्थात्—'मैं नीति पर चलने वाले, पुण्य कर्म करने वाले गृहस्थों के घर बनी रहती हूँ और उनका पुत्र के समान पालन करती हूँ।'

कुछ व्यक्तियों को 'जो मिला सो खर्च कर डाला' की आदत होती है। वे धन को वासनाओं-व्यसनों की पूर्ति में बर्बाद करते हैं। जो व्यक्ति केवल आज की चिंता करता है, कल की बात नहीं सोचता, इंद्रिय सुखों और वासनात्मक तृप्ति के लिए आमदनी से अधिक कर्ज लेकर खर्च करता रहता है, धन उसके लिए अभिशाप बन जाता है। सजा के रूप में शारीरिक रोग, द्वेष, शत्रुता, व्यसन, पारिवारिक कलह, दुर्गुण, व्यभिचार, चिंताएँ, बुरी आदतें, उद्दंडता, अहंकार, तृष्णा आदि के शिकार बने रहते हैं।

धन समृद्धि चाहने वालों के जीवन में आचरण की उत्कृष्टता अनिवार्य है। उनका नैतिक एवं चारित्रिक जीवन जितना उदात्त होगा, वे उतनी ही तेजी से आर्थिक प्रगति करेंगे, किंतु धन के साधक में व्यक्तिगत मैलापन भी नहीं होना चाहिए। कमल पवित्रता के साथ सौंदर्य का भी प्रतीक है। सौंदर्य का अर्थ मनुष्य का शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वच्छता है। लक्ष्मी के प्रिय पात्र बनने के लिए व्यक्तिगत आचरण, रहन-सहन, खान-पान में भी स्वच्छता, सरलता और सादगी होनी चाहिए। लक्ष्मी जी कहती हैं—

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कुचैलिन दंतमलोपधारिणै वध्याविनं निष्ठुर-भाषिणं च।
सूर्योदये धास्तमिते शयान जहाति लक्ष्मी यदि शार्ङ्गपाणिः।।

अर्थात्—'गंदे वस्त्र पहिनने वाले, दाँतों की सफाई न करने वाले, निष्ठुर भाषण करने वाले, जो सूर्योदय के पूर्व उठे नहीं, सूर्यास्त के समय सोते हों, ऐसे व्यक्ति चाहे वह भगवान् ही क्यों न हों लक्ष्मी जी उन्हें छोड़ जाती हैं।

लक्ष्मी जी के चित्र, आसन, हवन आदि में अलंकारिक रूप में ऐसे ही आध्यात्मिक गुण पिरोए हुए हैं, जो इन रहस्यों को जानकर धन प्राप्ति के लिए प्रयत्न करता है, उस पर लक्ष्मी जी अनुग्रह करती हैं और वह आर्थिक समृद्धि द्वारा अपने सुख और संतोष को बढ़ाता है। इस प्रकार नीतिपूर्वक श्रम और ईमानदारी से कमाया हुआ धन मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति में बड़ा सहायक होता है। इन नैतिक मूल्यों का कभी उल्लंघन न करे। यह धन मनुष्य के बड़े काम का है। उससे मनुष्य की सर्वतोमुखी उन्नति होती है।

आज के बढ़े हुए आर्थिक दुराचार के मूल में धन की अपरिमित लिप्सा ही काम कर रही है। यह स्पष्ट है कि जीवन की वास्तविक आवश्यकताएँ किसी को भ्रष्टाचार करने के लिए विवश नहीं कर रही हैं, क्योंकि मनुष्य की अनिवार्य आवश्यकताएँ इतनी कम होती हैं कि वे ईमानदारी की कमाई से भी यदि मितव्ययिता और सादगी का जीवन जिया जाए, तो सहज ही पूरी हो सकती है। आज का सारा मिथ्याचार मिथ्या आवश्यकताओं और आडंबरपूर्ण फिजूलखर्ची की आदतों के कारण ही फैला हुआ है।

आज लोग बड़े प्रदर्शनवादी और दुर्व्यसनी बन गए हैं। अनावश्यक अपव्ययता ने उनकी आवश्यकताएँ जमीन से आसमान तक बढ़ा दी हैं। हमारे जीवन में आदर्श का स्थान भोगवाद ने ले लिया है। 'सादा जीवन, उच्च विचार' का सिद्धांत भुलाकर लोग ओछे विचार और दिखावे का जीवन पसंद करने लगे हैं। कम से कम परिश्रम में अधिक से अधिक धन पैदा करने की प्रवृत्ति ने लोगों को भ्रष्टाचार के पाप की ओर अग्रसर कर दिया है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जहाँ इस पतन में मनुष्य की मानसिक दुर्बलता काम कर रही है, वहाँ कुछ खर्चीले सामाजिक रीति-रिवाज भी इसके लिए उत्तरदायी हैं। विवाह-शादी, दान-दहेज, प्रीतिभोज और मृत्युभोज जैसी सामाजिक कुरीतियाँ भी ऐसी ही रीति-रिवाजें हैं, जो हमें किसी प्रकार भी अधिक पैसा कमाने पर मजबूर कर रही हैं।

इसके साथ ही समाज में पैसा ही आदर, सम्मान और बड़प्पन का मापदंड बन गया है। जिसके पास जितना अधिक पैसा है, वह आदमी उतना ही अधिक बड़ा और आदर-सम्मान का पात्र माना जाने लगा है। पैसे को बड़प्पन का चिन्ह मानने वाले और धन देखकर अथवा उससे प्रभावित होकर किसी को आदर सम्मान देने वाले वह क्यों नहीं देखते कि इतना पैसा कमाया किस मार्ग से है ? पाप से पैसा कमाकर भी तब कोई पसीने की कमाई में विश्वास क्यों करने लगे ?

यह बात सही है कि पैसा ही बड़प्पन का चिन्ह माना जाता रहा है। उसका कारण यही था कि आसानी से न मिल सकने के कारण लोगों को इसके लिए कठिन परिश्रम एवं पुरुषार्थ करना पड़ता था। इस प्रकार जिसके पास जितना पैसा होता था, वह उतना ही परिश्रमी, सद्गुणी एवं पुरुषार्थी माना जाता था। इसप्रकार धन के कारण दिया जाने वाला बड़प्पन वास्तव में उस परिश्रम एवं पुरुषार्थ का ही सम्मान हुआ करता था, जो कि पैसा कमाने में लगाया था, किंतु अब स्थिति बदल गई है। लोग परिश्रम एवं पुरुषार्थ के बजाय धूर्तता, भ्रष्टाचार तथा बेईमानी से पैसा अधिक इकट्ठा करने लगे हैं। इसलिए पैसे के कारण किसी को सम्मान देने का मतलब है—भ्रष्टाचार एवं बेईमानी की प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देना।

यदि समाज से बेईमानी तथा भ्रष्टाचार की प्रवृत्तियों को कम करना है, तो पैसे के बजाय मनुष्य के गुणों का आदर करना होगा। जीवन से यथासंभव उन वस्तुओं का बहिष्कार करना होगा, जिनमें लोगों को भ्रष्टाचार करने का अवसर मिलता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अर्थ को नहीं, धर्म को प्रधानता मिले

निस्संदेह धन मनुष्य जीवन की एक आवश्यक वस्तु है, पर इतनी नहीं कि उसे प्रथम स्थान दिया जा सके। प्रथम स्थान धर्म का है। अर्थ का इसके बाद नंबर आता है। धर्म से रहित अर्थ व्यर्थ ही नहीं, हानिकारक भी है। इसके विपरीत अर्थरहित धर्मात्मा भी तेजस्वी जीवन व्यतीत कर सकता है।

अधर्मी व्यक्ति धन के लालच में बुरे से बुरे कार्य कर सकता है। उसने जो कमाया है, उसे बुरे कार्यों में खर्च कर सकता है। कमाई का स्रोत और खर्च का औचित्य अशुद्ध हो जाने पर धन अपने स्वामी का नाश करने वाला बन जाता है। ऐसी दशा में उसका न होना ही श्रेयस्कर माना जा सकता है।

धर्म अकेला ही सुदृढ़ रह सकता है। जिनमें धर्म बुद्धि है उसमें इतना पुरुषार्थ तो होगा ही कि अपने गुजारे लायक कमा सके। अधिक संचय न हो सके तो वह थोड़े में मितव्ययिता और संतोषपूर्वक काम चला सकता है। प्राचीनकाल में ऋषियों का जीवन इसी प्रकार का था। उन्होंने स्वेच्छा से निर्धनता अपनाकर यह बात प्रमाणित की थी कि स्वल्प-साधनों में भी मनुष्य का व्यक्तित्व सुविकसित रह सकता है। उसकी किसी भी प्रगति में बाधा नहीं पड़ सकती। संसार के अधिकांश महापुरुष गरीबी में ही पैदा हुए, बढ़े और पले तथा अंत तक उसी स्थिति में ही बने भी रहे, पर इससे उनकी महानता एवं सुख-शांति में रत्ती भर की कमी नहीं आई।

भारत के महान संत और सत्पुरुष तो प्रायः इसी श्रेणी के हुए हैं। अन्य धर्मों के प्रवर्तक भी ऐसे ही थे। जो संपन्न थे उन्होंने संपन्नता छोड़कर गरीबी को अपनाया, क्योंकि वे जानते थे कि अर्थ का बाहुल्य नहीं सद्गुणों का विकास ही मानव जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है। धन के झंझटों में अत्यधिक व्यस्त रहने वाले के लिए आत्मिक प्रगति की ओर समुचित ध्यान दे सकना संभव नहीं रहता, इसीलिए सत्पुरुषों को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अपनी आजीविका छोटी ही रखनी पड़ती है और स्वल्प साधनों से ही काम चलाना पड़ता है। बुद्ध, गांधी, नानक, रामतीर्थ, विवेकानंद, दयानंद, रैदास, कबीर आदि निर्धनता के वातावरण में ही पले और बढ़े थे। विश्वामित्र, बुद्ध, महावीर, मीरा आदि राजघरानों में जन्मे अवश्य पर उन्होंने उसका परित्याग कर गरीबी का जीवन स्वेच्छापूर्वक अपना लिया। ईसा और मुहम्मद गरीब घरों में जन्मे थे। संसार के सभी संतों और दार्शनिकों का जीवन गरीबी में बीता।

यहाँ गरीबी को आवश्यक नहीं बताया जा रहा है और न यह कहा जा रहा है कि मनुष्य को धन की आवश्यकता नहीं और उसे नहीं कमाना चाहिए, वरन् यह बताया जा रहा है कि धन के बिना भी श्रेष्ठ व्यक्तित्व बिना किसी कठिनाई के अपने जीवन विकास की समस्या हल कर सकते हैं। इसके विपरीत प्रचुर धन होते हुए भी धर्म बुद्धि के अभाव में व्यक्तित्व के सुविकसित होने पर मनुष्य विक्षुब्ध ही रहेगा। धन वृद्धि के साथ-साथ बढ़ने वाली अगणित समस्याएँ संतुलित मन से ही सुलझती हैं, उसका अभाव हो तो मनुष्य की अशांति और परेशानी ही बढ़ेगी।

कमाई के संबंध में धर्म नीति न हो तो चोरी, बेईमानी, रिश्वत, छल जुआ आदि अनैतिक साधन अपनाकर बिना मेहनत का पैसा इकट्ठा करेगा। इससे जिन लोगों से ऐसा धन लिया गया होगा, वे कराह रहे होंगे और उसे शाप दे रहे होंगे। जिस पैसे को कमाने में कम परिश्रम लगता है, वह खर्च भी अपव्यय से ही होता है। मुफ्त के माल को उड़ाने में दिल बेरहम रहने की कहावत गलत नहीं है। अनीति से उपार्जित धन आमतौर से नशाखोरी, व्यभिचार, सट्टेबाजी, शेखीखोरी जैसे कुमार्ग में व्यय होता है। चोरी, ठगी, बीमारी, राजदंड, गुंडागर्दी आदि माध्यमों में वह चला भी जाता है। बुरे पैसे के सहारे आमतौर से कोई फलता-फूलता नहीं देखा गया।

व्यक्ति का विकास न हुआ हो, धर्म बुद्धि जाग्रत् न हुई हो, तो परिश्रम से कमाए पैसे को भी उचित कार्य में खर्च नहीं किया जा सकता। ऐसे अनेक लोग हैं जिनकी तनख्वाहें औसत भारतीयों की आमदनी से कहीं अधिक हैं, पर वे उसमें से बहुत-सा पैसा चाय, सिगरेट, शराब, पान, सिनेमा, यारबाजी, शेखीखोरी जैसे अनुपयुक्त कार्यों में खर्च कर डालते हैं

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

और अच्छी आमदनी होते हुए भी अभावग्रस्त बने रहते हैं। शहरी धनिक वर्ग में ऐसे अगणित उदाहरण चाहे जब देखे जा सकते हैं।

धन आवश्यक है, उसकी आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता है। अनेक सुख-साधन तथा प्रगति के उपकरण धन के द्वारा प्राप्त होते हैं, पर इसके साथ ही एक बड़ी शर्त जुड़ी हुई है कि धन से भी पहले मनुष्य में सदाचरण की विवेक बुद्धि जाग्रत् होनी चाहिए, जिससे वह कमाई का सदुपयोग कर सके। पानी लेने से पहले उसे भरने का पात्र ढूँढ़ना पड़ता है। यदि पात्र न हो तो पानी को किस प्रकार लिया या रखा जा सकेगा ? इसी प्रकार मनुष्य की पात्रता का सुदृढ़ बनाया जाना धन उपार्जन से भी प्रमुख होना चाहिए, धन को प्राथमिकता मिल जाने से आजीविका तो बढ़ सकती है, पर इस बात का कोई ठिकाना नहीं कि उसका दुरुपयोग होने पर उल्टी विपत्ति तो न बढ़ जाएगी।

हमारे देश में आर्थिक प्रगति पर बहुत जोर दिया जा रहा है। राष्ट्र के कर्णधारों का पूरा ध्यान आर्थिक प्रगति में लगा हुआ है। जितनी भी योजनाएँ बनी हैं, वे सब आर्थिक उन्नति की दृष्टि से हैं। आर्थिक विकास अच्छी बात हैं, उसकी आवश्यकता भी है, उस प्रकार का एकांगी प्रयत्न कुछ विशेष उपयोगी सिद्ध न हो सकेगा। नैतिकता के अभाव में बढ़ा हुआ धन निरर्थक ही नहीं चला जएगा, वरन् अनेक समस्याएँ भी उत्पन्न करेगा। पिछले दिनों अमीरों ने जो धन लगाया, उसका अधिकांश भाग 'काला धन' के रूप में जब्त कर लिया गया। कहते हैं कि २० अरब रुपया इस प्रकार गुप्त पड़ा हुआ है। देहातों में जहाँ अन्न की कीमत बढ़ने तथा दूसरे कारणों से धन बढ़ा, वहाँ विवाह शादी, मृत्यु भोज, मुकदमेबाजी, फौजदारी आदि व्यर्थ कार्यों में वह नष्ट हो रहा है। राष्ट्रीय उन्नति के जिन कार्यों में यह बढ़ी हुई कमाई लगनी चाहिए थी, उसमें न गरीब लगा रहे हैं न अमीर। सच बात तो यह है कि गरीबी के कारण जो चरित्रगत दोष-दुर्गुण दबे पड़े थे, वे थोड़ा धन बढ़ते ही बुरी तरह उभर आए हैं और प्रत्येक क्षेत्र में अधिक भ्रष्टता दिखाई पड़ने लगी है।

धन बढ़ने दिया जाए, उसके लिए प्रयत्न भी किए जाएँ पर इससे भी पहली आवश्यकता है कि राष्ट्र का नैतिक स्तर ऊँचा उठाने के लिए आर्थिक प्रगति से भी अधिक प्रबल प्रयत्न किए जाएँ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

महात्मा गाँधी यही कहते थे। स्वराज्य उनका लक्ष्य नहीं माध्यम था। इसी आंदोलन के जरिए, वे भारतीय नागरिकों में मनुष्योचित आकांक्षाएँ एवं प्रवृत्तियाँ जाग्रत् कर रहे थे। स्वराज्य मिलने के बाद अब वह कार्य समाप्त नहीं हो जाना चाहिए, वरन् अपने भाग्य निर्माण की जो सुविधा मिली है, उसका लाभ लेकर हमें जनमानस को परिष्कृत करने एवं राष्ट्रीय चरित्र को ऊँचा उठाने के लिए शक्ति भर प्रयत्न करना चाहिए। इसके बिना आर्थिक प्रगति की चेष्टाएँ सफल होते हुए भी एक सार्वजनिक संकट के रूप में ही प्रतिफलित होंगी।

आर्थिक समृद्धि भी तभी हितकार होती है, जब वह आंतरिक समृद्धि के साथ-साथ हो। आस्थाओं की समृद्धि, उत्कृष्टता, आर्थिक वैभव से अधिक ही महत्त्वपूर्ण है। आर्थिक एवं भौतिक समृद्धि स्वयं में किसी निश्चित प्रवृत्ति की प्रेरणा में समर्थ नहीं। उनके सत् और असत्, शुभ और अशुभ—दोनों तरह के उपयोग संभव हैं। कैसा उपयोग किया जाएगा, यह इस पर निर्भर करता है कि अमुक समाज और व्यक्ति के जीवन में किस प्रकार के तत्त्वों की प्रधानता है—आसुरी अथवा दैवी, उपयोग मूलक अथवा समता मूलक ?

कहा जाता है कि आसुरी और दैवी तत्त्वों के, शैतान और भगवान् के, तम और सत के—सम्मिश्रण से मनुष्य की रचना हुई है, उसमें श्रेष्ठता भी पर्याप्त है, पर निकृष्टता भी कम नहीं। जब श्रेष्ठता का उभार आता है तो व्यक्ति संत, सज्जन, महामानव, भू-सुर एवं नारायण जैसा दीखता है, पर जब निकृष्टता उफनती है, तो उसकी दुष्प्रवृत्तियाँ इतनी भयावह हो उठती हैं कि पशु और पिशाच भी उससे बहुत पीछे रह जाते हैं। इन उफानों का संतुलन एवं नियंत्रण बनाए रखने के लिए अंतःकरण में जिस निष्ठा अंकुश की आवश्यकता पड़ती है, उसी नियामक तत्त्वदर्शन को, आस्था-शिलारोपण को, दृष्टिकोण को धर्म कहा जा सकता है। आंतरिक आस्था के अतिरिक्त मनुष्य जैसे अद्भुत बुद्धि एवं विलक्षण सूझ-बूझ वाले प्राणी को और किसी तरह कुमार्ग से बचाने और सन्मार्ग पर प्रेरित करने के लिए अन्य कोई आधार हो ही नहीं सकता। कानून दंड, लोक-निंदा आदि से बच निकलने के लिए उसके पास इतनी पगडंडियाँ मौजूद हैं तथा निकलती रहती हैं कि अनीति से रोका जा सकना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। असुरता के उफान को रोकने

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

और देवत्व की अभिलाषा को प्रोत्साहित करने के लिए जिस सर्वतोमुखी भावनात्मक निष्ठा को, धर्म-धारणा को तत्त्वदर्शी और महामनीषियों ने गढ़ा है, निस्संदेह उन्होंने विश्वमानव की महान सेवा की है।

विश्व-व्यवस्था का संचालन ठीक तरह चलता रहे और व्यक्ति अपनी नैतिक मर्यादाओं का उल्लंघन न करने पावे, इस प्रयोजन के लिए विनिर्मित की गई धर्म की मूल मान्यताएँ निस्संदेह हमारे लिए नितांत उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण हैं। धर्म की दार्शनिक व्याख्या में नैतिक एवं सामाजिक उत्कृष्टता की भावनाओं और प्रवृत्तियों का ही समावेश है और उन्हें कोई संप्रदाय झुठला नहीं सका है। मतमतांतर के अंतर्गत आने वाले क्रिया-कृत्यों अथवा रीति-रिवाजों में कितना ही अंतर क्यों न हो—नैतिक मूल्यों के बारे में प्रायः सर्वत्र एकता पाई जाती है। सत्य, प्रेम, न्याय, संयम, दया, उदारता, सहिष्णुता, सज्जनता, निर्मलता जैसे सद्गुणों को धर्म की आत्मा कह सकते हैं। संप्रदाय व्यवस्थाओं को उनका वस्त्र परिधान मात्र कहा जा सकता है। इन आवरणों पर अधिक ध्यान न दिया जाए, विशेषतया उन संदर्भों को नजर अंदाज कर दिया जाए, जो अनैतिकता के अतिरिक्त केवल बाह्य मान्यताओं के कारण दूसरों के प्रति कठोर—सहिष्णु बनाना सिखाते हैं। उसी प्रकार अदृश्य शक्तियों—देवी-देवताओं की मनौती-चुनौती को भी व्यक्तिगत रुचि की बात मान लिया जाए और उस पर सैद्धांतिक रूप से कुछ झंझट न खड़ा किया जाए तो सांप्रदायिकता के विषैले विकृत अंश से बचा जा सकता है और उसके उपयोगी अंश से लाभान्वित हुआ जा सकता है।

आज की परिस्थितियों में धर्म तत्त्व की मूल भावनाओं के अभिवर्धन और परिपोषण की जितनी अधिक आवश्यकता है, उतनी पहले कभी नहीं रही। बौद्धिक, आर्थिक और वैज्ञानिक विकास के कारण जिन सुविधा-साधनों की वृद्धि हुई है, उसने मनुष्य को अधिक लालची, अधिक विलासी और साथ ही अधिक धूर्त बना दिया है। फलस्वरूप कम काम करने, अधिक लाभ उठाने और नीति-अनीति का विचार किए बिना जैसे भी स्वार्थ सिद्धि होती है पूरा कर लेने की हविश-बेतरह जाग पड़ी है। धर्म का अंकुश न रहने से ये दुष्प्रवृत्तियाँ इतनी अधिक पनपी कि उन्हें अब एक परंपरा एवं सहज स्वाभाविकता माना जाने लगा है। किसी को दूसरों

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

की इन दुष्प्रवृत्तियों से हानि पहुँचे, तो वह जरूर चें-चें करेगा अन्यथा समाज में इस संदर्भ में बढ़ रही अवांछनीय हलचलों से किसी को शिकायत नहीं है। अनैतिकता का सामाजिक विरोध इसलिए समाप्त हो गया, क्योंकि इसको सर्वजनीन स्वाभाविक रीति-नीति मान लिया गया। अपराधों के प्रति शासकीय नियंत्रण एक तो वैसे ही प्रजातंत्र में बहुत ढीला होता है, अपराधियों को दंड प्रतिरोध के भय से मुक्ति मिल गई है। जेल आदि को सुधारगृह बनाकर अपराधियों को और भी अधिक सुविधा देने के प्रयास चलते रहते हैं। अतएव एक बार जेल हो जाने के बाद तो उस भय से भी निवृत्त हो जाते हैं और सुख-सुविधा भरी ससुराल मानने लगते हैं। ऐसी दशा में जब कि सामाजिक और शासकीय प्रतिबंध बुरी तरह ढीले हों, तो बढ़ती हुई अवांछनीयता को कौन रोके ? दुष्प्रवृत्तियों से नष्ट होने वाली मानवीय प्रतिष्ठा एवं संपदा को विनाशकारी मार्ग से बचाकर प्रगति की रचनात्मक दिशा में कौन नियोजित करे ? यदि इस दिशा में कुछ न किया जा सका तो दुष्प्रवृत्तियाँ व्यक्ति, समाज, शासन और अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रमों को जिस प्रकार प्रभावित कर रही हैं, उसका परिणाम सर्वनाश ही हो सकता है। कूटनीतिक धूर्तता और संहारक अस्त्रों की घुड़दौड़ एक दिन में मनुष्य जाति को सामूहिक आत्म-हत्या के लिए विवश कर सकती है।

अंधकारमय भविष्य की इन आशंका भरी संभावनाओं के बीच एक ही प्रकाश की किरण शेष रह जाती है कि धर्म-बुद्धि को, धर्मवृत्ति को फिर से सजग और समर्थ बनाया जाए। जन मानस में उन मूल्यों के प्रति निष्ठा उत्पन्न की जाए, जो मानवीय गरिमा एवं श्रेष्ठता के मूलभूत आधार हैं। जन आकांक्षाओं में सुख-साधनों की, सत्ता-अधिकार की, आतंक और अहंकार की जिस उद्धतता ने अधिकार जमा लिया है, उसका परिमार्जन करके यदि आत्मगौरव के लिए आदर्श चरित्र की आवश्यकता का भाव जगाया जाए तो ही दिशा परिवर्तन की आशा की जा सकती है और उस परिवर्तन से ही अंधकार से प्रकाश की ओर मुड़ चलने की संभावना सोची जा सकती है। यह परिवर्तन ही सर्वग्राही विनाश के पथ पर दौड़ती चली आ रही दुनियाँ को बचा सकने में समर्थ हो सकता है। कहना यह होगा कि धर्मश्रद्धा के पुनरुत्थान के बिना यह प्रयोजन पूरा हो सकने की कोई उचित राह दिखाई नहीं पड़ती। दूसरी राह उस अधिनायकवाद की है, जिसने व्यक्तिगत स्वाधीनता का अंत करके मनुष्य को सोचने से दूर, मात्र

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कार्य कर्त्री लौह मशीन के रूप में प्रस्तुत कर दिया है। यह स्थिति तो आज की विडंबना भरी दुर्दशा से अधिक भयावह सिद्ध होगी। अधिनायकवादी सर्वतोमुखी पराधीनता में एक बार फँस जाने पर त्राण पाना अशक्य नहीं तो दुस्तर अवश्य हो जाता है, जिसे भावनाशील और विचारशील लोगों में से कोई भी पसंद न करेगा।

मानवीय अंतःकरणों में कुमार्गगामिता और उसकी प्रतिक्रिया—विद्वेष से ऐसी आग जला करती है, जिसमें वैयक्तिक जीवन का आनंद उल्लास एक प्रकार से नष्ट ही होता चला जा रहा है। साधन-संपन्न होते हुए सुख-शांति की झलक किसी के जीवन में नहीं है। सर्वत्र अशांति, उद्वेग और असंतोष की ही आग सुलगती और धुएँ जैसी घुटन पैदा करती दिखाई देती है। सामाजिक जीवन में अपराध, अनाचार, छल, असहयोग एवं अविश्वास की बाढ़-सी आ रही है और फलस्वरूप पग-पग पर विग्रह और राग-द्वेष के ज्वालामुखी फूट रहे हैं। न व्यक्ति को सुख है, न समाज को शांति। नारकीय विद्रुपता इस संसार को अपंग और कुरूप बनाने पर तुली हुई है। इन परिस्थितियों में एक ही रास्ता शेष रह जाता है कि धर्म भावनाओं को मानवीय अंतःकरणों में गहन श्रद्धा के रूप में पुनः प्रतिष्ठित किया जाए और प्राचीनकाल जैसी धर्मपरायणता को वापिस लाने के लिए भागीरथ प्रयत्न किया जाए।

शास्त्रकार ने कहा है—

न जातु कायः कामनां उपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाऽभिवर्धते।।

अर्थात्—उपभोग से कामनायें शांत नहीं होतीं, अपितु जैसे यज्ञाग्नि में हविष्य डालने से वह और बढ़ती है वैसे ही कामनाएँ उपभोग से और धधकती हैं।

भर्तृहरि ने इसी स्थिति का वर्णन 'वैराग्यशतक' में करते हुए लिखा है—

भोगा न भुक्ता, वयमेव भुक्ता,
तपो न तप्ताः, वयमेव तप्ताः।
तृष्णा न जीर्णा, वयमेव जीर्णा,
कालो न यातो, वयमेव याताः।।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अर्थात्—उपभोग तो पूरे हुए नहीं, हम की चुक चले। तपस्या तो समाप्त ही नहीं हुई, हम ही समाप्त हो चले। तृष्णा बूढ़ी नहीं हुई, हम ही बूढ़े हो चले और समय नहीं बीता, हम ही चल दिए।

वस्तुओं की उपयोगिता तो समझें और सीखें, यह आवश्यक है। वस्तुओं, भौतिक साधन-सुविधाओं का सुंदर, संतुलित एवं सर्वोत्तम उपयोग क्या होगा तथा कैसे हो सकेगा, यह जानकारी अत्यावश्यक है। यह भी धार्मिकता का ही एक अंग है। कुशलता के साथ वस्तुओं का अधिकतम उपयोग आना जितना जरूरी है, उतना ही जरूरी है उपभोग की कामना को नियंत्रित-मर्यादित रखना, क्योंकि उपभोग की अनियंत्रित कामना का कोई ओर-छोर ही नहीं। वह कभी भी शांत नहीं हो सकती। उपयोग की अधिकतम सीमा निश्चित होती है, किंतु उपभोग की कोई सीमा नहीं। उसकी लालसा-लिप्सा बढ़ती ही जाती है और वह अपने धारण करने वाले को भी लीलकर हजम करने के बाद भी अतृप्त ही रही आती है।

इसलिए उपभोग को नियंत्रित करना आवश्यक है। उन्हें अमर्यादित रहने देने पर, अधिकाधिक उपभोग की भूख बढ़ने देने पर व्यक्ति और समाज का ही अंत निकट आ जाएगा, उपभोगों का नहीं। आवश्यकता उपयोग सीखने और उपभोग रोकने की है। ऐसा शिक्षण, व्यवस्था, नियम एवं प्रेरणा ही धर्म का कार्य है।

उपभोग प्रधान समाज में धन और भौतिक-सुविधाओं का अर्जन-संचय ही सबसे बड़ा पुरुषार्थ मान लिया जाता है और उसके लिए अपनाए गए साधनों को गौण एवं नगण्य। ऐसी स्थिति में, चरित्र को कोई महत्त्व नहीं दिए जाने से उसका ह्रास होने लगना स्वाभाविक है। चरित्र की कमी होने पर धन मारक और पीड़क ही सिद्ध होता है।

❐ ❐

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उपभोग में संयम और आचरण में उत्कृष्टता—सर्वोत्तम जीवन-रीति

● धन की सीमित आवश्यकता और उसका उपभोग

निर्वाहापयोगी साधनों के अर्जन हेतु धन एक आवश्यकता है। यह एक साधन है, जिसकी आवश्यकता से इन्कार नहीं किया जा सकता, पर इस आवश्यकता को इतना अधिक महत्त्व देना भी अनुचित है कि वह जीवन का एकमात्र लक्ष्य बन जाए, मनुष्य अपना सारा जीवन और सारी शक्ति को धनोपार्जन में ही लगा दे और स्वयं के अस्तित्व के अन्य महत्त्वपूर्ण पक्षों को गौण मानने लगे। गरीबी और अभाव बुरे हैं, उनसे छुटकारा पाने के लिए हर किसी को प्रयत्न करने चाहिए और इतनी ही बुरी धन प्राप्ति की आकांक्षा, धनवान् बनने की इच्छा, आकांक्षा को पूरी करने की उचित-अनुचित चेष्टाएँ हैं। स्मरण रखा जाना चाहिए कि धन का एक साधन है। साधन मात्र से अधिक कुछ नहीं। लेकिन साध्य-लक्ष्य बन जाय तो मनुष्य अपनी आवश्यकताओं को भूलने लगता है, जीवन के अन्य पक्षों की उपेक्षा करने लगता है।

प्रश्न उठता है कि धन को किस सीमा तक जीवन की आवश्यकता समझा जाए और किस सीमा से आगे उसे अति मानकर बुरा समझा जाए ? मनुष्य के निर्वाह की आवश्यकताएँ बहुत सीमित हैं। आधा किलो अनाज, तन ढकने को दस गज कपड़ा और सर ढकने को छाया, शिक्षा और स्वास्थ्य की सुविधायें तथा स्वस्थ मनोरंजन की व्यवस्था—इतनी भर मनुष्य की निजी आवश्यकता है। इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ईमानदारी पूर्वक आठ या छह घंटे श्रम करना पर्याप्त है। ईमानदारी से कोई व्यक्ति इतने समय तक श्रम करे; तो उसकी क्षमता, योग्यता, बुद्धिमत्ता और स्थिति को देखते हुए उसका निर्वाह जरा भी मुश्किल नहीं है। शेष सारा समय अपने विकास और लोकोपयोगी कार्यों में लगाकर मनुष्य महान बन सकता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जीवन को ऊँचा उठाने में बाधक बनाने वाली ऐषणाओं में से प्रथम है—वित्तेषणा। सर्वप्रथम मनुष्य के हृदय में यही आकांक्षा उठती है और वह इसे पूरा करने में इस प्रकार व्यस्त हो उठता है कि लगता है अन्य बातें गौण हो गईं। जिन महापुरुषों ने औसत स्तर के जीवन से ऊँचा उठकर समाज के लिए जो कुछ अनुकरणीय कर दिखाया है, उन्होंने अपनी बाधाओं से मुकाबला करते हुए सर्वप्रथम चोट वित्तेषणा पर की है। एक तिहाई विश्व जिसकी, विचारधारा का अनुयाई है। इस महामानव कार्लमार्क्स ने वित्तेषणा को न केवल नष्ट ही कर दिया, वरन् अपनी आवश्यकताओं की उपेक्षा कर दी थी। मार्क्स ने जीविकोपार्जन के साधनों को कभी महत्त्व नहीं दिया। उनके मन में विश्व के करोड़ों पीड़ितों और दलितों के लिए कसक थी। उनके लिए कुछ करने को वे दिन-दिन भर लाइब्रेरियों में बैठकर अध्ययन करते रहते। कई बार ऐसा अवसर आया कि पास में पैसा न होने के कारण घर में चूल्हा नहीं जला। कभी उधार लेकर तो कभी घर का कोई सामान गिरवी रखकर, वे भोजन जुटाते। दो कमरों में आठ सदस्यों वाला उनका परिवार निवास करता, यहाँ तक गरीबी के कारण उनके दो बच्चे असमय ही काल-कवलित हो गए। उनके कफन का कपड़ा भी मुश्किल से जुटाया जा सका। ऐसी परिस्थितियों में अविचलित रहकर उन्होंने अपना प्रमुख लक्ष्य मानवता की सेवा को सामने रखा और यही कारण है कि एक तिहाई विश्व उनकी निर्धारित व्यवस्था को अपने यहाँ लागू किए हुए है।

विश्ववंद्य महात्मा गाँधी के संबंध में सर्वविदित है कि यदि वे चाहते, तो अपने वंशजों के लिए लाखों की संपत्ति जमा कर सकते थे, पर उनका जीवन लक्ष्य था—राष्ट्र सेवा और दरिद्र नारायण की उपासना। इसलिए उन्होंने औसत भारतीय स्तर का जीवन ही जिया और गरीबों की तरह रहे। कभी अपने लिए एक पैसा भी बचाकर या जोड़कर नहीं रखा।

जवाहरलाल नेहरू अच्छे संपन्न परिवार के थे। चाहते तो उसी स्थिति में रहते हुए आनंद मजे का जीवन व्यतीत कर सकते थे, पर देश के लिए उन्होंने समस्त सुख-सुविधाओं का परित्याग कर स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रूस का कायाकल्प कर देने वाले महापुरुष लेनिन सामंत परिवार से आए थे, परंतु उन्होंने न्याय के लिए सामंतों के खिलाफ ही लड़ाई लड़ी और जब देश की बागडोर उनके हाथों में आई तो डेस्क की दराज में रखी सूखी रोटियाँ जब भूख लगती तो काम करते-करते खा लिया करते और फिर समाज देवता की सेवा आराधना में जुट जाते।

धन संपत्ति और शान-शौकत ही यदि जीवन का लक्ष्य रहा होता, तो राणाप्रताप से लेकर भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, रास बिहारी बोस, अरविंद, तिलक, गोखले, सुभाषचंद्र बोस आदि कितने ही क्रांतिकारी और राष्ट्रीय नेता टाठ-बाट का जीवन व्यतीत कर सकते थे। उनके सामने वैसी परिस्थितियाँ थीं कि यदि उनसे समझौता कर लेते, तो बिना कुछ किए उपलब्ध साधनों से ही जीवन आराम के साथ व्यतीत हो सकता था। इतना ही नहीं थोड़ा-सा भी परिश्रम करते तो अपनी धन-संपदा को और भी बढ़ा सकते थे, लेकिन विचारवान् और प्रतिभाशाली व्यक्तियों ने धनोपार्जन को ही सर्व प्रमुख नहीं माना। जीवन के लिए एक आवश्यकता को जितना महत्त्व दिया और कई अवसरों पर तो उससे भी कम महत्त्व दिया। अपनी शक्ति और सामर्थ्य को धन की बेदी पर ही न होमकर उन्होंने मनुष्य जाति और समाज के लिए त्याग-बलिदान करने का आदर्श अपनाया।

सीमित उपार्जन और साधनों में भी सुख-संतोषपूर्वक गुजर किया जा सकता है तथा समाज के लिए बहुत किया भी जा सकता है। इस तथ्य को आत्मसात् करने में महावीर प्रसाद द्विवेदी का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने साहित्य सेवा को ही अपना जीवन लक्ष्य चुना और साधारण-सी नौकरी में मिलने वाले थोड़े-से वेतन में अपना तथा अपने परिवार का गुजारा चलाते थे। कम आवश्यकताएँ—सादा जीवन और उद्देश्यपूर्ण प्रवृत्तियाँ इन तीन प्रवृत्तियों को अपनाने से आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी को न इधर-उधर भाग-दौड़ करनी पड़ी और न ही व्यर्थ के झगड़े खड़े करने पड़े। जितना मिलता उसी में निर्वाह करते और अपना बचा हुआ सारा समय निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति में लगाते।

प्रसिद्ध समाज सुधारक ईश्वरचंद्र विद्यासागर के संबंध में भी विख्यात है कि उन्होंने आय बढ़ाने की ओर कभी ध्यान नहीं दिया, बल्कि समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने के लिए ही वे जीवन भर लड़ते

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रहे। नौकरी से वेतन के रूप में जो कुछ मिलता था, उसका अधिकांश भाग वे निर्धन छात्रों की सहायता के लिए दे दिया करते।

अगणित ऐसे महान हुए हैं जिन्होंने धनवान बनने पर नहीं, मनुष्य बनने पर जोर दिया और वे करोड़ों व्यक्तियों के, असहायों के महामानव बन गए। प्रत्येक व्यक्ति महान बन सकता है यदि वह धन की आवश्यकता को सही अर्थों में समझे और उसी रूप में पूरा करे। अधिकांश प्रतिभाशाली व सामर्थ्यवान् व्यक्ति अपने गुणों और योग्यता को बिकाऊ वस्तु मानकर उन्हें भुनाने निकल पड़ते हैं, जबकि लाभदायक यह है कि उन पर निज का स्वामित्व रखा जाए और एक सीमा तक ही उपार्जन में उसका उपयोग किया जाए। धनवान् बनना इस प्रकार भी आसान नहीं है। प्रायः हाँ अपने पास अधिक धन-संपत्ति इकट्ठी करने के लिए बेईमानी का रास्ता अपनाना पड़ता है। अन्यथा ईमानदारी और न्यायपूर्ण उपार्जन के प्रयासों से आवश्यकताओं की पूर्ति भर हो सके, इतना ही मिल पाता है। ईमानदारी से कमाई गई जीविका द्वारा सुखपूर्वक निर्वाह करने का एकमेव रास्ता है—अपनी आवश्यकताएँ कम करना और उन्हें अनिवार्य स्तर की ही रखना।

परमात्मा ने हवा, पानी और धूप सब लोगों के लिए सुलभ कर रखे हैं। आवश्यकतानुसार प्रत्येक वस्तु आसानी से मिल जाती है क्योंकि भोजन से अधिक इन चीजों की आवश्यकता है। अन्न का क्रम इन सबके बाद है। पानी की दिन में कई बार आवश्यकता पड़ती है, इसलिए वह अन्न की अपेक्षा अधिक आसानी से मिल जाता है। उससे भी ज्यादा आवश्यकता रहती है—वायु की। वायु और भी प्रचुरता से उपलब्ध है। अपने अनुपात से सभी आवश्यक वस्तुएँ तदनुरूप सुलभ होती हैं। सबसे अंतिम जरूरत है धन-संपत्ति की, जिससे अन्य आवश्यकताएँ पूरी होती हैं, लेकिन कम मात्रा में उपलब्ध होने के कारण उस पर कई लोग अपना अधिकार कर बैठते हैं, तो कितने कंगाल रह जाते हैं। यदि हवा-पानी की तरह ही उसका भी उपयोग करना उचित है, तो आवश्यकता से अधिक धन रखने वालों को किसी भी दिशा में ईमानदार नहीं कहा जाना चाहिए।

सीमित परिवार में संपत्ति होने के कारण कुछ लोगों के अधिकारों में रहने की बात का औचित्य तब समझ में आता है,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जबकि उसका उपयोग केवल मात्र अपने लिए ही न किया जा रहा हो। खजांची या मैनेजर की भाँति उसे सँभालने का दायित्व पूरा किया जा रहा हो। संपत्तिवान यह दृष्टिकोण अपनाकर भी अपनी अर्जित संपदा का सदुपयोग कर सकते हैं, लेकिन अधिकांश लोगों के लिए धन संपत्ति अहंकार को मजबूत बनाने के अतिरिक्त कुछ और अर्थ नहीं रखती। न जाने किन कारणों से धन को अनावश्यक महत्त्व दिया जाता है और जिसके पास पैसा होता है, उसकी प्रतिष्ठा की जाती है, जबकि कई अवसरों पर धन जरा भी काम नहीं आता।

सद्बुद्धि संपन्न धनवानों ने धन का श्रेष्ठतम उपयोग इसी में माना है कि वह लोकमंगल के कार्यों में लगता रहे। सत्ताईस वर्ष की आयु में ही सोलह हजार रुपए रोज कमाने वाले धनपति ऐंड्रयू कार्नेगी ने अपने उद्योग-व्यवसायों से जितना भी कमाया, वह सबका सब साथियों, साझीदारों और गरीबों में बाँट दिया। जब भी मुनाफे का हिसाब लगाया जाता, तो वे अपने लिए आवश्यकता भर रखकर शेष सारा का सारा लोकोपयोगी कार्यों में लगा देते। गरीब विद्यार्थियों के लिए कार्नेगी ने अपने जीवनकाल में ३० करोड़ रुपए दान किए थे। सार्वजनिक पुस्तकालयों, शिक्षण-संस्थाओं तथा अन्य लोक हित के कार्यों में उन्होंने पूर्ण जीवनकाल में डेढ़ अरब रुपया लगाया।

अमेरिका के तीन-चार धनपतियों में गिने जाने वाले रॉकफेलर ने जो स्वयं मैट्रिक तक भी नहीं पढ़े थे, शिक्षा प्रसार और विद्यार्थियों की सहायता हेतु दो करोड़ रुपए मरते समय खर्च किए। उनकी संपत्ति का मूल्य लगभग एक अरब डालर आँका गया, जिसका एक बड़ा भाग रॉकफेलर ने लोक मंगल के लिए खर्च करने की वसीयत की।

हास्य विनोद से करोड़ों कमाने वाले मार्कट्बेन ने जरूरतमंदों को इतनी सहायता दी कि उनके पास कभी पैसा न जुड़ सका। इसी प्रकार संपत्तिवान होते हुए भी उसका सदुपयोग कर कितने ही व्यक्तियों ने धन-संपत्ति को सार्थक बनाया है। संपदा का उचित अर्थ है कि वह जरूरतमंदों के काम आए। लोकोपयोगी कार्यों में लगे और इस प्रकार संपत्तिवान तथा संपदा दोनों ही कृत्कृत्य हों।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

धन की आवश्यकता सभी के लिए एक जैसी है—धनवान हो या गरीब, पर संपदाशालियों को विशेष रूप से इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वें पैसे को अहंकार पूर्ति का साधन न बनाएँ और न ही उसका उपयोग विलास-वैभव में करें। यह प्रदर्शन निर्धनों में ईर्ष्या की भावना उपन्न कर सकता है। अतः उचित यही है कि उसका उपयोग गिरे हुए को ऊपर उठाने और पिछड़ों को आगे बढ़ाने में ही किया जाए। धन का अनावश्यक प्रदर्शन स्वयं को तो तृप्ति एवं संतोष देता ही नहीं, दूसरों में भी प्रेरणा या स्वस्थ प्रतिस्पर्धा नहीं पैदा करता—ईर्ष्या, शत्रुता, विरोध तथा घृणा ही उत्पन्न करता है।

❐ ❐

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

वैभव की दुनियाँ और टूटता हुआ आदमी

भौतिक-साधनों में आत्म तृप्ति और सुख संतोष मानने वाला मनुष्य अपने अस्तित्व के लिए ही बहुत बड़ा खतरा पैदा कर लेता है। ज्यों-ज्यों ही सुख-सुविधाओं के साधन बढ़ते जा रहे हैं, समाज के विचारशील लोग चिंतित होते जा रहे हैं कि मानव सभ्यता कहीं आत्म-हत्या की स्थिति में न पहुँच जाए।

विदेशी सभ्यता में मुक्त उपभोग और स्वच्छंद यौनाचार की प्रवृत्तियाँ जिस तेजी से बढ़ रही हैं, उसी तेजी से हमारे देश का धनवान और संपन्न वर्ग भी उस ओर झुकता जा रहा है। इस प्रवृत्ति के भयंकर परिणाम देश और समाज के शारीरिक तथा बौद्धिक स्वास्थ्य को किस दशा में ढकेल देंगे कुछ कहा नहीं जा सकता।

यौन स्वेच्छाचार को, उच्छृंखल काम को मनुष्य की मूल प्रवृत्ति मान लेने के सिद्धांत से समस्या और भी अधिक उमड़कर सामने आई है। अनेक वैज्ञानिकों तथा चिंतकों ने इस प्रतिपादन को निराधार और अवास्तविक सिद्ध कर दिया है। फ़िर भी काम-लोलुप लोग इस विचार की आड़ में अपनी पाशविक इच्छाओं को संतुष्ट करने की

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कुचेष्टा करते रहते हैं। इसी बढ़ती हुई यौन-स्वच्छंदता के कारण स्वास्थ्य विज्ञानियों के सम्मुख एक चिंताजनक स्थिति पैदा हो गई है।

महिलाओं में भी इसका दुष्प्रभाव उसी तेजी के साथ फैलता जा रहा है। १२ अक्टूबर १९६८ को 'न्यूज वीक' पत्रिका में प्रकाशित एक रिपोर्ट में कहा गया है कि स्वच्छंद यौनाचार के कारण अमेरिका में प्रतिवर्ष ४० हजार महिलाएँ एक विशेष प्रकार के यौन कैंसर का शिकार होती हैं। स्मरणीय है कि इस प्रकार के कैंसर का अभी तक कोई भी उपचार या इलाज ढूँढ़ा नहीं जा सका है तथा दूसरी ओर यह रोग दिनों दिन फैलता ही जा रहा है।

अकेले अमेरिका में हर साल तीन लाख स्त्रियाँ अविवाहित ही माँ बन जाती हैं। वहाँ का हर चौदहवाँ बच्चा अवैध संतान है। इन अवैध बच्चों की माताओं में से ४४ प्रतिशत स्त्रियों की आयु २० वर्ष से नीचे ही होती है। अमेरिका का न्यूयार्क शहर जो विश्व में शिक्षा, सभ्यता और उद्योग व्यवसाय का बहुत बड़ा केंद्र माना जाता है, मैं तो स्थिति और भी बदतर है। वहाँ हर सातवाँ बच्चा अवैध संतान के रूप में जन्म लेता है। बेचारे को यह भी पता नहीं कि उसका कौन पिता है ? और आश्चर्य की बात तो यह कि कई बार प्रसूता स्त्रियाँ भी यह नहीं बता पातीं कि वह किसका बच्चा है ? इंग्लैण्ड में भी हर तेरहवाँ बच्चा अनैतिक संबंधों का परिणाम है। आस्ट्रेलिया में बारहवाँ, न्यूजीलैंड में आठवाँ, सोवियत रूस में नौवाँ बच्चा अज्ञात पिता की संतान होता है।

कुछ तथाकथित प्रगतिवादी विचारक पिछले दिनों यह कहते रहे हैं कि लोगों की नैतिक मान्यताएँ बदल रही हैं और ऐसी स्थिति में यौन-मर्यादाओं को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए। ऐसे लोग भी अविवाहित मातृत्व और उसके दुष्परिणामों को देखते हुए यह कहने लगे हैं कि यौन-शुचिता मनुष्य की नैसर्गिक मर्यादा है। उसके अभाव में वे सारी विकृतियाँ आ जाती हैं, जो किसी भी प्राकृतिक सीमाओं का उल्लंघन करने से आती हैं।

बदलते हुए नैतिक मूल्यों की बात एक बार स्वीकार भी कर ली जाए तो पेरिस के डॉक्टर यूनी व्रांट के निष्कर्ष नजरअंदाज नहीं किए जा सकते हैं। प्रयोगों द्वारा उन्होंने यौन-शुचिता के समर्थन में तर्क देकर युवक-युवतियों को आत्म संयम की सलाह दी है। उन्होंने कहा है

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कि नाजायज बच्चे अन्य बच्चों की अपेक्षा अधिक बेडौल, मरीज, अल्पायु और कमजोर मनोबल वाले होते हैं।

प्रजनन द्वारा संसार को एक अनुपम उपहार—नागरिक देने के लिए यौन-शुचिता अनिवार्य और आवश्यक शर्त है। बदलते नैतिक मूल्यों की बात कहकर इस प्रकृति को मनुष्य का मूल स्वभाव मानने वाले भ्रांत विचारक कहते देखे जाते हैं कि पशु-पक्षियों में भी यौन संबंधों की कोई मर्यादा नहीं है। प्रकृति की प्रेरणा से वे यथा समय एक-दूसरे के समीप जाते हैं। यहाँ यह बात स्मरण रखी जानी चाहिए कि मनुष्य और पशु-पक्षियों में किसी भी प्रकार समानता की स्थापना नहीं की जा सकती। मनुष्य की स्थिति पशु-पक्षियों से कई बातों में भिन्न है। भोजन, वस्त्र, निवास, शिक्षा आदि आवश्यकताएँ वह पशु-पक्षियों की तरह पूरी नहीं करता। इन्हें पूरा करने का उसका अपना एक ढंग है, विशेष सामाजिक स्तर है, जो संसार के अन्य प्राणियों से उसमें एक स्पष्ट अंतर बताता है।

इसी प्रकार मनुष्य की इस अवांछनीय गतिविधि को भी पशु-पक्षियों का संदर्भ देकर कदापि उचित नहीं ठहराया जा सकता। इसके लिए तो उन्हीं नैतिक मूल्यों का अवलंबन होगा, जो सदा से व्यक्ति और समाज के आदर्श रहे हैं।

मातृत्व और संतान की संभावना को बहुत कुछ परिवार नियोजन की प्रचलित पद्धतियों ने कम कर दिया है। फिर भी अनैतिक संबंधों से हानि कम नहीं है। शिकागो विश्वविद्यालय के कुछ डॉक्टरों ने इस विषय में खोजबीन करने के लिए मानसिक चिकित्सालय का निरीक्षण किया। वहाँ पाया कि ७२ से ८७ प्रतिशत रोगी व्यभिचार और अनैतिक संबंधों के कारण रोग ग्रस्त हुए हैं। उन क्षणों में पड़ने वाला अतिरिक्त स्नायुविक दबाव ही विक्षिप्तता का कारण बन जाता है।

बढ़ते वैभव की चकाचौंध में नैतिक मूल्यों में परिवर्तन की बात को झूठी दिलासा ही कहा जा सकता है, वरन् इस प्रतिपादन में कोई तथ्य नहीं है, जिसके आधार पर इसे उचित ठहराया जा सके।

विलासिता और भोग की बढ़ती हुई इस वृत्ति का कारण बताते हुए अमेरिका के ही एक प्रसिद्ध डॉक्टर श्री रिचार्ड ने कहा—"हमारा समाज इतना अधिक विलासी बन गया है कि उसे यौन सुख के अतिरिक्त संसार में और कोई सुख दिखाई नहीं देता। अनियंत्रित भोग वासना ने योरोप के

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सारे समाज को चरित्र भ्रष्ट बना दिया। वहाँ कोई पति-पत्नी अगले क्षण के लिए निश्चित नहीं रह सकते। किसी को अपने साथी पर यह विश्वास नहीं कि अगले क्षण किसी नए साथी का चुनाव न कर लेगा। इसी का परिणाम है कि अकेले अमेरिका में ३० लाख परित्यक्ता महिलाएँ ऐसी हैं, जिन्होंने या तो स्वयं अपने पतियों को छोड़ दिया है अथवा पुरुषों ने उनका साथ छोड़ दिया।

यह झंझावात यांत्रिक सभ्यता और तज्जनित वैभव-संपन्नता का चलाया हुआ है। अनियंत्रित भोग वासना मनुष्य को विनाश के गर्त में ही तो ढकेलेगी। इसी कारण वैज्ञानिक प्रगति भी मनुष्य के लिए चिंता का विषय बन गई है। लंदन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हार्वर्ड डिगले ने इस समस्या की ओर इशारा करते हुए कहा है—"जब हम उस विज्ञान की प्रगति के बारे में विचार करते हैं, जो आजकल प्रचलित है तो हम ऐसी परिस्थितियाँ पाते हैं, जिनसे देवदूत भी रोने लगे। यह ऐसा युग नहीं है कि विज्ञान की शक्ति को आँख मींचकर महत्त्व दिया जाए।"

अमेरिका, इंग्लैंड, कनाडा आदि यूरोपीय देशों के जन-जीवन में विज्ञान तिलतिल में समा गया है। निःसंदेह इस विज्ञान ने मनुष्य की दैनंदिन आवश्यकताओं को आसानी से पूरा करने में सहायता दी है, परंतु इस कारण मनुष्य दिनोंदिन परावलंबी तथ विलासी बनता जा रहा है। यह विलासिता उसे कहाँ ले जाकर छोड़ेगी—कुछ कहा नहीं जा सकता।

अविवाहित मातृत्व यौन स्वेच्छाचार जैसी और भी ऐसी कई समस्याएँ हैं—जो गहराई से विचार करने पर यांत्रिक सभ्यता की देन लगेंगी। विज्ञान ने मनुष्य को इतना वैभवशाली बना दिया है कि इस बोझ के कारण वह स्वयं को ही तोड़ने में लग गया है। इस अनियंत्रित विलासिता पर नियंत्रण पाना जरूरी है अन्यथा मानव सभ्यता का विनाश ही होकर रहेगा।

सच पूछा जाए तो विलासिता की अनियंत्रित भूख न तो स्वाभाविक है, न ही शुभ। यह मनुष्य की प्रगति का नहीं, उसके दर्प की अति का परिणाम है। यांत्रिक प्रगति करने वाला मनुष्य यह भूल ही बैठा है कि प्रगति के इस पथ पर चलने का उसका प्रारंभिक प्रयोजन क्या था ? जीवन क्रम को सरल बनाना, वातावरण अपने अधिक अनुकूल बनाना, कठिनाइयों पर विजय पाना ही

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यांत्रिक-औद्योगिक वैज्ञानिक प्रगति का उद्देश्य था। संकल्प, पुरुषार्थ एवं परिश्रम के साथ उस दिशा में बढ़ पड़ने पर सफलता स्वाभाविक एवं अनिवार्य ही थी। ऐसा होना ईश्वरीय व्यवस्था एवं प्राकृतिक नियमों के अनुरूप ही था, पर किसी भी क्षेत्र में प्रगति करते ही, उपलब्ध सिद्धियों विभूतियों से बौरा जाना, इतराने लगना, अहं के नशे में चूर-चूर हो जाना सामान्यतः मनुष्यों की कमजोरी रही है। योगसिद्धियों से इतराने लगने वाले साधक योग भ्रष्ट हो जाते हैं, सत्तामद से बौराए शासक कर्त्तव्यच्युत होकर जनरोष का कारण बनते हैं, उसी प्रकार यांत्रिक प्रगति के परिणामों से लाभान्वित लोग अहं से उन्मत्त हो यही भूल बैठे कि संपूर्ण वैज्ञानिक खोजें प्रकृति के कुछ क्रियाकलापों का विनम्र अनुकरण मात्र हैं। सफलताओं के नशे में वे इन अनुकरणों को प्रकृति पर विजय कहने-बताने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि ऐसे मनुष्य प्राणिमात्र एवं सृष्टि पर लागू होने वाले प्राकृतिक नियमों की उपेक्षा करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानने लगे।

स्पष्ट है कि वैयक्तिक जीवन एवं सामाजिक जीवन दोनों के विकास तथा संतुलन के लिए संयम, मर्यादा, ईमानदारी तथा सदाशयता से भरपूर रीति-नीति अत्यावश्यक है।

❑ ❑

अपरिग्रह आज के युग में और भी अनिवार्य है

इसी से भारतीय धर्म एवं संस्कृति में अपरिग्रह को मानवीय सद्गुणों में विशिष्ट स्थान मिला है। जीवन लक्ष्य को प्रथम अनिवार्यता 'यम' के अंतर्गत इसे सत्य, अहिंसा, अस्तेय व ब्रह्मचर्य के समकक्ष स्थान मिला है। इसे पंच महाव्रतों में एक माना गया है। बौद्ध व अन्यान्य प्रशाखाओं में भी परिग्रह को निंदनीय ही ठहराया गया है।

इतर धर्म दर्शनों में भी इसके महत्त्व को पूरी तरह स्वीकारा गया है। इस्लाम, ईसाई, पारसी आदि अन्य धर्मों में इसे मानवीय

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कर्त्तव्य के अंतर्गत माना गया है। परिग्रह को पाप व अपरिग्रह को पुण्य संज्ञा मिली है।

अपरिग्रह से तात्पर्य है प्रकृति व समाज प्रदत्त वस्तुओं को औचित्य से अधिक अपने पास संगृहित नहीं करना, औचित्य से अधिक उपभोग न करना। परिवार में दस सदस्य होते हैं तो चौके में जो भी रसोई बनती है या बाजार से जो मिठाई आती है—कपड़ा व अन्य आवश्यक वस्तुएँ खरीदी जाती हैं, उनमें प्रत्येक को समान भाग मिलता है। ठीक इसी प्रकार संसार के समस्त प्राणियों को—एक परिवार मानकर अपने भाग की वस्तुओं का उपभोग व संग्रह करना अपरिग्रह है। यह मनुष्य का धर्म है। औचित्य की इस सीमा का उल्लंघन 'पाप' माना जाता है।

परिग्रह को 'पाप' तथा अपरिग्रह को 'पुण्य' क्यों माना गया ? यह प्रश्न प्रत्येक विचारशील व्यक्ति के मन में उठना स्वाभाविक है। आज के कई शास्त्र परिग्रह को पाप नहीं मानते। जैसे अर्थशास्त्र पूँजी को व्यक्ति की अपनी परिग्रह वृत्ति व कष्ट सहिष्णुता का परिणाम मानता है और उसके औचित्य को स्वीकारता है। वह उसके औचित्य अनौचित्य को नहीं देखता। यह मान्यता व्यक्ति को व्यक्तिवादी बनाती है। व्यक्तिवाद समाज की प्रगति का शत्रु है। अपरिग्रह को पुण्य मानने के पीछे मूल कारण यही है कि यह वृत्ति व्यक्ति को समाज से जोड़ती है। यह पुल है जो समाज व व्यक्ति के बीच की खाई को पाटता है।

परिग्रही व्यक्ति समाज के हित से निरंतर कटता जाता है। उसे अपने हित का तो ध्यान रहता है, किंतु अपने हित के साथ होने वाले दूसरे के अहित को वह नहीं देखता। वह ब्याज कमाने के लिए संग्रह करता है। अधिक लाभ कमाने के उद्देश्य से ऐसी वस्तुओं पर साँप बनकर बैठ जाता है, जिनके अभाव में जनता दुखी होती है।

परिग्रह का अर्थ संग्रह करना ही नहीं है। अपने उपभोग, सुख, ऐश्वर्य व अधिक लाभ पाने के उद्देश्य से इकट्ठी की हुई वस्तुएँ व धन-संपदा ही परिग्रह की सीमा में आती है। जिसके पीछे लोकहित का, परमार्थ का उद्देश्य हो व प्रत्यक्ष-परोक्ष में उससे अपना हित व समाज का अहित जुड़ा न हो वह परिग्रह नहीं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जब अपरिग्रह को मानव धर्म का महत्त्वपूर्ण अंग निर्धारित किया गया, उन दिनों व्यक्ति की आवश्यकताएँ भी सीमित थीं। व्यक्ति आज की अपेक्षा अधिक आत्म निर्भर था। पारस्परिक निर्भरता की परिधि ग्राम व प्रदेश तक ही सीमित थी। तब अपरिग्रह वृत्ति इतनी अनिवार्य नहीं थी, जितनी आज है। व्यक्ति की आत्मनिर्भरता आज के वैज्ञानिक युग में लगभग समाप्त ही हो गई है। ऐसी स्थिति में अपरिग्रह का महत्त्व बढ़ जाता है।

मुद्रा अपनी सार्वदेशिक तथा सार्वभौमिक क्रय शक्ति से संपन्न होने के कारण परिग्रह को और भी सुलभ कर देती है। एक व्यक्ति आज अरबों-खरबों रुपयों पर अपना स्वत्व आसानी से जमाए रख सकता है। उनके रक्षण तथा स्थानांतरण में उसे कोई विशेष जोखिम तथा भय नहीं उठाना पड़ता। ऐसी स्थिति में व्यक्ति की तृष्णा भी सुरसा के मुँह की तरह फैलने लगी है।

अर्थशास्त्र के सिद्धांतों, मुद्रा की क्रय शक्ति, वैज्ञानिक प्रगति, यांत्रिक सभ्यता, अधिकोष (बैंकिंग) सुविधाओं की प्रचुरता, यातायात व संचार के द्रुत साधनों ने मनुष्य की उपार्जन शक्ति में आश्चर्यजनक वृद्धि कर दी है। ये ही साधन सामाजिक वैषम्य को बढ़ाने में भी सहायक हो रहे हैं।

दूर क्यों जाएँ हमारे देश की दशा देखें तो स्पष्ट हो जाएगा कि व्यक्ति अपने विश्व मानव परिवार के सदस्यों के हिस्से को, उनके मुँह की रोटी को किस निर्दयता से छीनकर अपने खजाने को भर रहा है ? उसके लिए वह नीति-अनीति, औचित्य-अनौचित्य की चिंता नहीं करता। लोग दाने-दाने को तरसें, किंतु स्वार्थ की मदिरा पी मदमत्त हुए लोगों को अपने गोदामों में अधिक लाभ कमाने के उद्देश्य से हजारों टन खाद्यान्न छिपाते हुए लज्जा नहीं आती—यही हाल अन्य उपभोक्ता वस्तुओं का है। अधिक लाभ कमाने का लोभ जिन व्यापारियों के मन में शेर की दाढ़ में खून की तरह लग गया है, वे जाने क्या-क्या हथकंडे अपनाते हैं, यह बताने की आवश्यकता नहीं। उसके परिणामस्वरूप देश में गरीबी, बेकारी, महँगाई, भ्रष्टाचार आदि अनेकानेक समस्याएँ भी उठ खड़ी हुई हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यदि रुपए को आधार मानकर देखा जाए कि किस व्यक्ति को कितना प्रतिशत मिल रहा है, तो आज की इस लुट-खसोट का स्वरूप सामने आ जाता है। भारत में साढ़े बाईस करोड़ आदमी गरीब हैं। तीस करोड़ व्यक्तियों की आय राष्ट्रीय आय से भी कम है। जिसके हाथ में साधन, सत्ता व सामर्थ्य है, वह हजार हाथों से दूसरे का धन लूट रहा है—हिस्सा छीन रहा है।

सोवियत रूस की साम्यवादी क्रांति इसी वैषम्य की पृष्ठभूमि पर उपजी थी। डंडे के बल पर, शस्त्र के बल पर उन लोगों से उनके वे खजाने छीन लिए, जो उन्होंने लोगों का रक्त चूस-चूस कर भरे थे। इस प्रवाह की अनिवार्यता को कोई रोक नहीं सकता। राष्ट्रीयकरण की गतिविधियाँ हमारे देश में भी चल पड़ी हैं। इसके पहले कि जिनके मुँह के कौर छिन गए हैं, वे पुनः उन्हें उन लोगों से छीन लें, जिन्होंने परिग्रह के पाप किए हैं, उसके पहले ही उसका प्रायश्चित कर लेना चाहिए और अमर्यादित उपभोग से विरत होकर साधन-सुविधाओं के सदुपयोग की दिशा में प्रवृत्त होना चाहिए, यही धर्म का मार्ग है।

धर्म के शाश्वत नियमों का पालन आज के युग में और भी अनिवार्य हो गया है। उनके पालन में ही व्यक्ति का अपना तथा अपने समाज का हित है। यदि आज का यह भ्रमित मनुष्य पुनः उस राह पर नहीं चलता, न शोषित वर्ग ही विद्रोह कर सकता है तो भी प्रकृति की दंड व्यवस्था तो अपना काम करेगी ही।

❐ ❐

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

: युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :

ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें :
http://hindi.awgp.org/about_us

- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता** : विचारों को परिस्कृत और ऊँचा उथाने मे समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार** : जिन्हों ने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वाँ प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक** : मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने मे समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।

- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार** : जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता** : जिन्हों ने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि "धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है "।
- **'२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' के उद्दघोषक** : जिन्हों ने '२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनानी** : जिन्हों ने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी "श्रीराम मत्त" के रुप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक** : जिन्हों ने गायत्री और यज्ञ को रुढियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्‌बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी** : जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षो में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक** : जिन्हों ने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोडों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक** : जिन्हों ने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढियों की समाप्ति हेतु अद्‌भूत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरुप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक** : जिन्हों ने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना** : जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोंडों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार,समाज,राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।

Free Download Complete Work Of Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya, Founder of All World Gayatri Pariwar
Books, Magazines, Articles, Stories, Poems, Great Personalities and many more at
www.vicharkrantibooks.org | www.awgp.org